वेताल-पच्चीसी



अनुवादक—सूरत कवि

प्रकाशक—(राजा) रामकुमार-प्रेस-बुकडिपो, लखनऊ

उत्तराधिकारी

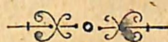
नवलकिशोर-प्रेस-बुकडिपो, लखनऊ

मूल्य २)



श्रीगणेशाय नमः।

वेतालपचीसी।



इस कथा का प्रारम्भ इस प्रकार से है कि मुहम्मदशाह बादशाह [illegible] के राज्य में महाराजा जयसिंहसवाई ने, जो जयनगर के स्वामी थे, [illegible] से कहा कि वेतालपचीसी को, जो कि संस्कृत में है, तुम [illegible] में कहो। तब उसने राजाज्ञा के अनुसार उसे ब्रज की बोली में कही। अब वही खड़ी बोली में छापी जाती है, जिससे सब लोगों की समझ में आवे।

पहिली कहानी।

धारा नगर नाम एक शहर था। वहाँ का राजा गन्धर्वसेन था। उसके चार रानियाँ थीं। उनसे छः बेटे थे। एक से एक पण्डित और बलवान् थे। मृत्युवश थोड़े दिनों में वह राजा मर गया और उसकी जगह शंख नामक उसका बड़ा बेटा राजा हुआ। फिर कितने दिनों पीछे उसका छोटा [illegible] विक्रम, बड़े भाई को मारकर आप राजा हुआ और निर्विघ्न राज्य करने लगा। दिनों दिन उसका राज्य ऐसा बढ़ा कि सम्पूर्ण जम्बूद्वीप का राजा वह हो गया और अचल राज्य करके शाका बाँधा। कितने दिनों के पीछे राजा ने यह मन में विचारा कि जिन मुल्कों का नाम मैं सुनता [illegible] उनकी सैर करना चाहिये। अपने मन में यह ठान राजगद्दी अपने छोटे भाई भर्तृहरि को सौंप तथा आप योगी बन देश-देश की और बन-बन की सैर करने लगा।

एक ब्राह्मण उस नगर में तपस्या करता था। एक दिन देवता [illegible] प्रसन्न हो उसे अमृतफल ला दिया। तब उसने उस फल को अपने घर में लाकर ब्राह्मणी से कहा कि देवता ने फल देते समय मुझसे यह कहा है कि जो कोई इसे खायगा, वह अमर होगा। यह सुन ब्राह्मणी बहुत रोई और कहने लगी कि यह हमें बड़ा पाप भुगतना पड़ा। क्योंकि अमर होके कब तक भीख माँगेंगी। इससे तो मरना अच्छा है। जो मर जावें तो संसार के दुःख से छूट जायँ। तब ब्राह्मण बोला कि लेते तो मैं ले आया, पर तेरी बात सुन-कर मेरी बुद्धि जाती रही। अब जो तू बतावे सो करूँ। फिर उससे ब्राह्मणी

ने [illegible] यह फल [illegible] राजा को दो और इसके पलटे द्रव्य लो; जिससे लोक [illegible] परल[illegible] को [illegible] हो । यह बात सुन ब्राह्मण राजा के पास गया और [illegible] का हाल वर्णन करके कहा कि हे महाराज! यह फल आप लीजिये और मुझे कुछ द्रव्य दीजिये । आपके चिरंजीवी रहने से मुझे सुख है । तब राजा ने ब्राह्मण को लाख रुपये दे और विदा कर महल में आ जिस रानी को [illegible] चाहता था उसे वह फल देकर कहा कि ऐ रानी ! जो [illegible] तो अमर होगी और सर्वदा जवान रहेगी । रानी ने इस [illegible] सुन राजा से फल ले लिया । राजा बाहर सभा में आया ।

[illegible] का मित्र शहर कोतवाल था । उसने वह फल उसे दे दिया । संयोगवश [illegible] वही फल अपनी प्यारी वेश्या को देकर उसका गुण वर्णन किया । उस वेश्या ने अपने मन में विचारा कि यह फल राजा [illegible] योग्य है । इसलिये उसने जाकर राजा को वह फल दिया । राजा ने फल ले उसे बहुत सा धन दे विदा किया । फल को देख और अपने मन में चिन्ता कर तथा संसार से उदास हो वह कहने लगा कि इस संसार की माया किसी काम की नहीं है । क्योंकि इससे अन्त को नरक में पड़ना होता है । इस कारण उत्तम यह है कि तपस्या कीजिये और भगवान् के स्मरण [illegible] हिये । [illegible] जिससे आगे को भला हो । यह बात मन में ठान और महल में जा उसने रानी से पूछा कि तूने वह फल क्या किया ? उसने कहा मैं उसे खा गई । यह सुनते ही राजा ने वह फल रानी को दिखाया । रानी देखते ही भौचक-सी रह गई और उससे कुछ उत्तर न बन आया । तब राजा ने बाहर आ उस फल को धुलवाकर खाया और राजपाट छोड़, योगी बन, अकेला बिना कहे सुने, वन को सिधारा ।

उन दिनों विक्रम का राज्य खाली रहा । जब यह समाचार राजा इन्द्र को मिला तब उन्होंने एक देव को धारा नगर की रखवाली के लिये भेजा । वह दिन-रात उस नगर की चौकसी किया करता । इस बात का शोर प्रत्येक [illegible] हो गया कि राजा भर्तृहरि राज्य छोड़ निकल गया । यह खबर राजा विक्रम सुनते ही अपने देश में आया । नगर में प्रवेश करते समय आधी रात का समय था । इसलिये उस देव ने पुकारा तू कौन है, और कहाँ जाता है? खड़ा रह ! अपना नाम बता । तब राजा ने कहा, मैं राजा विक्रम हूँ । अपने नगर में जाता हूँ । तू कौन है जो मुझे रोकता है ? तब देव बोला कि मुझे देवताओं के राजा इन्द्र ने इस नगरी की रखवाली को भेजा है । जो तुम सच्चे

राजा विक्रम हो तो, पहिले मुझसे लड़ो, पीछे शहर में जाओ। इस बात के सुनते ही राजा ने चरना काछकर उस देव को ललकारा। वह देव भी राजा के सम्मुख हुआ और दोनों में युद्ध होने लगा। निदान राजा ने देव को पछाड़ा और उसकी छाती पर चढ़ बैठा। तब उसने कहा, हे राजा! तूने मुझे पछाड़ा, इससे मैं तुझे जीवदान देता हूँ। तब तो राजा ने हँसकर कहा तू दीवाना हुआ है; किसको जीवदान देता है। मैं चाहूँ तो तुझे मार डालूँ तू मुझे जीवदान क्या देगा? तब वह देव बोला कि हे राजा! मैं तुझे मृत्यु से बचाता हूँ। मेरी एक बात सुन, फिर निर्भय हो सम्पूर्ण दुनिया का राज्य कर। तब राजा ने उसे छोड़ दिया और वह उसकी बात सुनने लगा।

देव ने कहा कि इस नगर में चन्द्रभान नाम का एक राजा बड़ा दाता था। संयोगवश एक दिन वह जंगल को निकल गया तो देखता क्या है कि एक तपस्वी वृक्ष में उलटा लटका हुआ है और धुआँ पी पीकर रहता है। न किसी से कुछ लेता है, न बात करता है। उसकी यह दशा देख राजा ने अपने घर आ और सभा में बैठकर यह कहा कि जो कोई उस तपस्वी को लावे वह लाख रुपये पावे। इस बात को सुनकर एक वेश्या ने राजा के पास आ यह विनय की कि यदि महाराज की आज्ञा पाऊँ तो उसी तपस्वी से एक लड़का उत्पन्न करा, उसी के कन्धे पर उसे चढ़ाकर ले आऊँ। इस बात के सुनने से राजा को आश्चर्य हुआ और उस वेश्या को तपस्वी को लाने के लिये बीड़ा देकर बिदा किया।

वह वेश्या उस वन में गई और योगी की कुटी पर पहुँचकर देखती क्या है कि वह योगी सच ही उलटा लटक रहा है। न कुछ खाता है, न पीता है और सूख रहा है। तब उस वेश्या ने हलुआ पका उस तपस्वी के मुँह में दिया। उसे मीठा मीठा जो लगा तो वह उसे चाट गया। फिर उस वेश्या ने और लगा दिया। इसी तरह से दो दिन तक हलुआ चटाया। जब उसके खाने से योगी के शरीर में कुछ बल हुआ, तब उसने आँखें खोल वृक्ष से नीचे उतर, उससे पूछा, तू यहाँ किस काम को आई है? वेश्या ने कहा मैं देवकन्या हूँ, स्वर्गलोक में तपस्या करती थी। अब इस वन में आई हूँ। यह सुन तपस्वी ने कहा कि तुम्हारी मढ़ी कहाँ है हमें दिखाओ। वेश्या उस तपस्वी को अपनी मढ़ी में लाकर, षट्रस भोजन करवाने लगी; जिससे तपस्वी ने वृक्ष में लटकना और धुआँ पीना छोड़ दिया। प्रतिदिन वह खाना खाने और पानी पीने लगा। निदान बल पाकर मदन ने उसे सताया।

...तो तपस्वी ... गई थी, उससे भोग किया। वेश्या के गर्भ रहा और समय पर पुत्र उत्पन्न हुआ। जब बालक कई महीने का हुआ तब उस वेश्या ने तपस्वी से कहा कि महात्मा अब चलकर तीर्थयात्रा कीजिये, जिससे शरीर के सब पाप कटें। ऐसी बातें कर उसे भुलावा दे, लड़का उसके कन्धे पर चढ़ा वह राजा की मजलिस को चली कि जहाँ से वह उस बात का बीड़ा उठा ... थी।

... सुन ... समय राजा के सम्मुख वह पहुँची, उस समय राजा उसको दूर से ... ही पहिचान गया और लड़के को तपस्वी के कन्धे पर देख सभासदों से कहने लगा ... देखो यह वही वेश्या है, जो योगी को लेने को गई थी। उन्होंने विनय की कि महाराज! ... कहते हैं। जो जो बातें हुजूर से वह विनय कर गई थी, वे सब देखने में आईं। ये सब बातें राजा की और ... जलिसियों की योगी ने सुनीं, तब वह समझा कि राजा ने मेरी तपस्या डिगाने के लिये यह यत्न किया था। यह अपने जी में विचारकर वह वहाँ से उलटा। फिर शहर के बाहर आ उसने उस लड़के को मार डाला और जंगल में जाय योग करने लगा। थोड़े दिनों में वह राजा मृत्युवश हुआ और योगी ने योग पूरा किया।

इसका ब्यौरा इस प्रकार से है कि तुम तीन आदमी एक नगर, एक नक्षत्र, एक योग और एक ही मुहूर्त में पैदा हुए हो। तुमने राजा के घर में जन्म लिया, दूसरा तेली हुआ, तीसरा योगी कुम्हार के घर में पैदा हुआ। तुम तो यहाँ का राज्य करते हो और तेली का बेटा पाताल का राजा था सो उस कुम्हार ने अपना योग साधा और तेली को मार मरघट में पिशाच बना, सिरसे के वृक्ष में उलटा लटका रक्खा है और तेरे मारने के विचार में है। यदि तू उससे बचेगा तो राज्य करेगा। इस अहवाल से मैंने तुझे सचेत किया। तू उससे गाफिल मत रहना।

इतनी बात कहकर देव तो चला गया और राजा अपने महल में विराजमान हुआ। जब सवेरा हुआ तो राजा बाहर निकल कर बैठा और दरबार आम का हुक्म दिया। यह सुन जितने छोटे बड़े नौकर चाकर थे सबने आ आकर हुजूर में नजरें दीं। बाजन बजने लगे, सम्पूर्ण शहर में बड़ा आनन्द और प्रसन्नता हुई, प्रत्येक घर में नाचरंग होने लगा। राजा धर्मराज्य करने लगा।

एक दिन का हाल है कि शान्तिशील नामक योगी एक फल हाथ में

लिये राजा की सभा में आया और वह फल राजा के हाथ में दे उसी जगह आसन बिछाकर बैठ गया और एक घड़ी पीछे चला गया। राजा ने उसके जाने के बाद अपने मन में विचारा कि जिसे देव ने कहा था यह वही तो नहीं है। यह विचारकर उसने वह फल न खाया। भण्डारी को बुलाकर दिया कि इसे अच्छी तरह से रखना। योगी प्रतिदिन इसी तरह से आता और एक फल दे जाता। संयोगवश एक दिन राजा अपने अस्तबल के देखने को गया था और मुसाहब भी कुछ साथ थे। इतने में योगी भी आ हुआ और उसी तरह से फल राजा के हाथ में दे दिया। राजा उसे उछालने लगा तो वह एकबारगी हाथ से पृथ्वी पर गिर पड़ा और बन्दर ने उठाकर उसे तोड़ डाला। तब उसमें से एक ऐसा लाल निकला कि उसकी ज्योति देख राजा और मुसाहब विस्मित हुए। तब राजा ने योगी से कहा कि तूने मुझे यह लाल किस वास्ते दिया? उसने उत्तर दिया कि हे महाराज! शास्त्र में लिखा है कि खाली हाथ इतनी जगह न जावे—राजा, गुरु, ज्योतिषी, वैद्य और बेटी के। इस वास्ते कि यहाँ फल से फल मिलता है।

हे राजा! तुम एक लाल को क्या कहते हो, मैंने जितने फल दिये हैं, उन सबमें रत्न हैं। यह बात सुन राजा ने भण्डारी से कहा कि जितने फल मैंने तुझे दिये हैं वे सब ले आ। भण्डारी राजा की आज्ञा पा, तुरन्त ले आया। उन फलों को जो तुड़वाया तो सबमें से एक एक लाल पाया। इतने लाल देख राजा बहुत प्रसन्न हुआ और रत्नपारखी को बुलवा, लालों को परखाने लगा और इस प्रकार से कहा कि साथ कुछ नहीं जायगा, संसार में धर्म बड़ी वस्तु है। जो कुछ हरएक लाल का मोल हो, सो धर्म से कह दो। यह बात सुन जौहरी बोला कि महाराज! आपने सच कहा, जिसका धर्म रहेगा उसका सब कुछ रहेगा। धर्म ही साथ जाता है और वही दोनों जहान में काम आता है। सुनो महाराज! एक एक लाल अपने अपने रंग ढंग में दुरुस्त है तो हरएक का मोल करोड़ करोड़ रुपये कहूँ तो भी हो नहीं सकता। अर्थात् एक एक राज्य एक एक लाल का मोल है। यह सुन राजा ने बहुत प्रसन्न हो, जौहरी को खिलत दे बिदा किया और योगी का हाथ पकड़ गद्दी पर ले आया और कहने लगा कि मेरा तो सम्पूर्ण देश भी एक लाल के मोल का नहीं है। तुमने दिगम्बर होकर जो इतने रत्न मुझे दिये हैं, इसका क्या मतलब है। सो तुम मुझसे कहो। योगी बोला, हे राजा! इतनी बातें प्रकट करनी योग्य नहीं हैं—यन्त्र, मन्त्र, औषध और, घर का हाल, काम

का खाना, बुरी बात सुनी हुई—ये सब बातें सभा में कही नहीं जातीं, एकान्त में कहूँगा। सुनो राजा, यह रीति है जो बात छः कान में पड़ती है वह छिपी नहीं रहती। चार कान की बात कोई नहीं सुनता और दो कान की बात ब्रह्मा भी नहीं जानता। आदमी का तो क्या कहना।

यह बात सुन राजा योगी को एकान्त में ले जाकर पूछने लगा कि जी तुमने मुझे इतने लाल दिये और एक दिन भोजन भी न किया, इस सुन तुमसे बहुत लज्जित हूँ। अपना मतलब हो सो कहो। योगी बोला, महाराज! गोदावरी नदी के तीर महाश्मशान में मैं मन्त्र सिद्ध करूँगा। उसमें अष्टसिद्धि वह मिलेंगी। सो मैं तुमसे भिक्षा माँगता हूँ कि एक दिन तुम मेरे पास रात भर रहना। तुम्हारे रहने से मेरा मन्त्र सिद्ध हो जावेगा। राजा ने कहा बहुत अच्छा, मैं आऊँगा। वह दिन तुम हमें बताये जाओ। योगी बोला, भादों बदी चौदस मङ्गलवार की साँझ को हथियार बाँध अकेले तुम मेरे पास आना। राजा ने कहा तुम जाओ मैं नियत समय पर अकेला आऊँगा। इस तरह राजा से वचन ले, योगी विदा हो मठ में जा, तैयार हो सब सामान ले मरघट में जा बैठा और यहाँ राजा अपने जी में विचार करने लगा।

इतने में वह समय भी आ पहुँचा। तब राजा तलवार बाँध, लँगोट कस, अकेला रात को योगी के पास जा पहुँचा और उसको आदेश सुनाया। योगी ने कहा आओ बैठो। राजा वहाँ बैठ गया तो क्या देखता है कि चारों तरफ भूत, प्रेत, डाइन तरह तरह की भयानक सूरतें बनाये नाचते हैं और योगी बीच में बैठा दो कपाल बजाता है। राजा ने यह देख कुछ भी भय न किया और योगी से कहा कि मुझे क्या आज्ञा है? उसने कहा राजा! तुम आये हो तो एक काम करो। यहाँ से दक्षिण की ओर, दो कोस पर एक मरघट है उसमें एक सिरस का वृक्ष है। उसमें एक मुर्दा लटका है। उसे मेरे पास तुरन्त लाओ, मैं यहाँ पूजा करता हूँ।

राजा को उधर भेज आप आसन मार जप करने लगा। एक तो अँधेरी रात ही डरावनी थी, दूसरे मेह की ऐसी झड़ी लगी हुई थी, मानो आज बरसकर फिर कभी न बरसेगा और भूत, प्रेत ऐसा शोर-गुल करते थे कि शूरवीर भी हो तो भी देख के घबरा जावे। परन्तु राजा अपनी राह चला जाता था। साँप जो आन आनकर पाँव में लिपटते थे, उनको मन्त्र पढ़ छुड़ा देता। निदान ज्यों त्यों कठिन बाट काटकर वह उस श्मशान में पहुँचा

तो देखा कि भूत प्रेत हाथ पकड़-पकड़ आदमियों को दे मारते हैं। डायन लड़कों के कलेजे चाबती हैं। शेर दहाड़ते हैं। हाथी चिग्घाड़ें मारते हैं। निदान उस वृक्ष को जो ध्यान कर देखा तो जड़ से फुनगी तक हर एक डार पात उसका दहड़ दहड़ जल रहा है और चारों ओर शोर-गुल हो रहा है कि मार मार, ले ले, खबरदार, जाने न पावे। राजा ने यह हाल देख कुछ भय न किया। वह अपने जी में कहता था, हो न हो यह वही योगी है जिसकी बात मुझसे देव ने कही थी। फिर उस वृक्ष के पास जो देखा तो एक मुर्दा रस्सी से बँधा उलटा लटकता है। मुर्दे को देख राजा प्रसन्न हुआ कि मेरा परिश्रम सफल हुआ। खाँड़ा फरी ले उस वृक्ष पर निर्भय चढ़ उसने तलवार का एक हाथ ऐसा मारा कि रस्सी कट गई और मुर्दा नीचे गिर पड़ा और गिरते ही ढाढ़ें मार मार रोने लगा।

राजा उसकी आवाज सुन प्रसन्न हो अपने मन में कहने लगा, भला यह आदमी जीता तो है। वृक्ष से उतर उससे पूछा तू कौन है। यह सुनते ही वह खिलखिला के हँसा। राजा को इस बात का बड़ा अचम्भा हुआ। वह मुर्दा उसी वृक्ष में फिर लटक गया और राजा फिर वृक्ष पर चढ़ उसे बगल में दबा नीचे ले आया, और कहा ऐ चाण्डाल! तू कौन है? मुझसे कह, उसने तो भी कुछ जवाब न दिया। राजा ने सोच कर जी में कहा, शायद यह वही तेली है जिसको देव ने बतलाया था कि योगी ने श्मशान बना कर रक्खा है। यह विचार उसे चादर में बाँध योगी के पास ले चला। जो नर ऐसा साहस करेगा वह सिद्ध होगा। तब वह वेताल बोला तू कौन है, और मुझे कहाँ लिये जाता है? राजा ने जवाब दिया कि मैं राजा विक्रम हूँ, तुझे योगी के पास लिये जाता हूँ। उसने कहा एक शर्त से चलता हूँ कि जो रास्ते में बोलेगा तो मैं उलटा फिर जाऊँगा। राजा ने उसकी शर्त मानी और ले चला। फिर वेताल बोला कि हे राजा! पण्डित, चतुर, बुद्धिमान् इनके दिन गीत और शास्त्र के आनन्द में कटते हैं और क्रूर मूर्खों के दिन कलह और नींद में। इससे भला यह है कि इतनी राह अच्छी बातों की चर्चा में कट जाय। हे राजा! जो मैं कथा कहता हूँ, उसे सुन।

प्रतापमुकुट नामक काशी का राजा था और उसके बेटे का नाम वज्रमुकुट था। उसकी रानी का नाम महादेवी था। एक दिन वह अपने दीवान के बेटे को साथ ले शिकार को गया और बहुत दूर जङ्गल में जा निकला। उस जङ्गल में एक सुन्दर तालाब देखा कि उसके किनारे हंस, चकवा,

चकई, बगुले, मुर्गाबियें सब के सब कल्लोल कर रहे थे और चारों ओर भाँति भाँति के पक्के घाट बने हुए थे। तालाब में कमल फूले हुए, किनारों पर वृक्ष लगे हुए थे, उनकी घनी छाँह में तीनों हवायें आती थीं और पक्षी वृक्षों पर चहचहा रहे थे। रंग रंग के फूल फूल रहे थे। उन पर भौंरों के झुण्ड गूँज रहे थे। ये दोनों उस तालाब के किनारे पहुँचे और मुँह हाथ धोकर ऊपर आये। वहाँ एक महादेवजी का मन्दिर था। वहाँ घोड़ों को बाँध मन्दिर के भीतर गये और महादेवजी का दर्शन करके बाहर निकले। जितनी देर उनको दर्शन में लगी, उतने अरसे में किसी राजा की बेटी सहेलियों का झुण्ड साथ लिये हुए उसी तालाब के दूसरे किनारे पर स्नान करने आई। स्नान, ध्यान, पूजा कर वह सहेलियों को साथ लिये वृक्षों की छाँह में टहलने लगी।

इधर दीवान का बेटा बैठा था और राजा का बेटा फिरता था कि अचानक राजकुमार और राजकन्या की चार आँखें हुईं। रूप को देखते ही युवराज मोहित हो गया और अपने दिल में कहने लगा कि हे चाण्डाल काम! मुझको क्यों सताता है। उधर राजपुत्री ने कुँवर को देख सिर में जो कमल का फूल पूजा करके रक्खा था उसे हाथ में ले, कान से लगा, दाँत से कतर और पाँव तले दे, फिर छाती से लगा लिया और सखियों को साथ ले सवार हो अपने मकान को चली गई। उधर राजपुत्र निराश हो विरह में दुखी हुआ दीवान के लड़के के पास आया और लज्जा के साथ उसके आगे सब हाल कहने लगा कि हे मित्र! मैंने एक अति सुन्दरी नायिका देखी है। उसका न मैं नाम जानता हूँ न ठाँव। यदि वह मुझे न मिलेगी तो मैं अपनी जान न रक्खूँगा। यह मैंने जी में निश्चय विचारा है। यह हाल सुन सचिवपुत्र उसे सवार करवा घर को तो ले आया, परन्तु राजपुत्र विरह की पीर से ऐसा विकल था कि लिखना, पढ़ना, खाना, पीना, सोना, राजकाज सब कुछ तज बैठा। दिन-रात उसी की सूरत का चित्र लिख-लिख देखता और रोता। न अपनी कहता न और की सुनता। दीवान के बेटे ने उसकी यह दशा देख उससे कहा कि जिसने इश्क की राह में पैर रक्खा है, वह जिया नहीं है और जो जिया तो उसने बहुत दुःख पाया। इस वास्ते ज्ञानी लोग इस राह में पाँव नहीं रखते।

उसकी बात सुन राजकुमार बोला कि मैंने तो इस पंथ में पाँव दिया है, अब चाहे सुख हो चाहे दुःख। जब ऐसी दृढ़ बात मित्र की सुनी, तब बोला कि महाराज! तुमसे चलते समय उसने कुछ कहा था? तुमने कुछ उससे कहा था?

शाहजादे ने जवाब दिया कि न मैंने कुछ कहा न उसने कुछ सुना। तब दीवान का बेटा बोला कि उसका मिलना बहुत कठिन है। इस पर राजपुत्र ने कहा जो वह मिली तो जान रही, नहीं तो गई। फिर उसने पूछा, कुछ इशारा भी किया था या नहीं? कुँवर ने कहा जो उसने हरकतें की थीं सो ये हैं कि एकाएक मुझको देख, सिर पर से कमल का फूल उतार, कान से लगा, दाँत से कतर, पाँव तले देकर, छाती से लगा लिया था। यह सुन दीवान के बेटे ने कहा कि उसके इशारों को हम समझ गये और नाम-ठाम सब उसका जान गये। राजा के बेटे ने कहा कि जो समझे हो सो कहो। तब मन्त्री के पुत्र ने कहा कि महाराज! कमल का फूल सिर से उतार, कान से जो लगाया तो मानो उसने तुमको बताया कि मैं कर्णाटक की रहनेवाली हूँ और जो दाँत से कतरा सो कहा कि दन्तवाट राजा की बेटी हूँ और जो पाँव से दबाया सो कहा कि पद्मावती मेरा नाम है और जो छाती से लगाया सो कहा कि तुम मेरे हृदय में बसे हो। जब इतनी बातें कुँवर ने सुनीं तब उससे कहा, बेहतर यह है कि मुझे उसके शहर में ले चलो। यह कहते ही कपड़े पहन, हथियार बाँध, कुछ जवाहिर ले और घोड़ों पर सवार हो दोनों ने उस तरफ की राह ली।

कई दिनों के बाद कर्णाटक देश में वे पहुँचे। जब शहर की सैर करते हुए राजा के महलों के नीचे आये तब वे देखते क्या हैं कि एक बुढ़िया अपने दरवाजे पर बैठी हुई चरखा कातती है। तब वे दोनों घोड़ों से उतर उसके पास जा कहने लगे कि माई! हम मुसाफिर सौदागर हैं, माल हमारा पीछे आता है और हम जगह ढूँढ़ने के वास्ते आगे बढ़ आये हैं। यदि हमें जगह दो तो हम रहें। बुढ़िया उनकी सूरतों को देख और बातों को सुन, रहम करके बोली, यह घर तुम्हारा है; जब तक जी चाहे रहो। यह सुन वे मकान में उतरे तो कितनी एक देर पीछे बुढ़िया उनके पास आ, बैठकर, बातें करने लगी। इसमें दीवान के बेटे ने उससे पूछा, तेरी आल औलाद और कुनबे में कौन-कौन हैं और क्योंकर निर्वाह होता है। बुढ़िया ने कहा मेरा बेटा राजा की सेवा में आनन्दपूर्वक अच्छी तरह से रहता है और पद्मावती जो राजकन्या है मैं उसकी दुग्ध पिलाई हूँ। इस बुढ़ापे के आने से घर में रहती हूँ, परन्तु राजा मेरे खाने-पीने की खबर लेता है और उस लड़की के देखने को नित्य एक वक्त मैं जाती हूँ। वहाँ से आकर घर में अपना दुखड़ा किया करती हूँ। यह बात राजपुत्र ने सुन दिल में प्रसन्न हो बुढ़िया से कहा

कि कल जिस वक्त जाने लगना तो एक सँदेशा हमारा भी लेती जाना। उसने कहा बेटा कल पर क्यों? अभी मुझसे जो कुछ कहो मैं तेरा सँदेशा पहुँचा दूँ। तब उसने कहा तू इतना जाकर कह दे कि ज्येष्ठसुदी पञ्चमी को तालाब के किनारे जिस राजपुत्र को तुमने देखा था, सो आ पहुँचा है।

इतनी बात के सुनते ही बुढ़िया लाठी हाथ में लिये राजमन्दिर को गई। वहाँ जाकर देखा कि राजकन्या अकेली बैठी है। जब यह सामने पहुँची तब उसने सलाम किया। यह आशिष देकर बोली कि धिया! बालकपन में तेरी सेवा की और दूध पिलाया। अब भगवान् ने तुझे बड़ा किया। यह जी चाहता है कि तेरी जवानी का सुख देखूँ तो मुझे भी चैन होवे। इस तरह प्रीति भरी बातें कहने लगी और यह भी कहा कि ज्येष्ठसुदी पञ्चमी को तालाब किनारे जिस कुँवर का तूने मन हर लिया है, वह मेरे घर आकर उतरा है और तुझे यह सँदेशा दिया है और यह भी कहा है कि जो हमसे वंचन किया था वह पूरा करो, हम आ पहुँचे हैं। मैं भी यह कहती हूँ कि वह कुँवर तेरे ही योग्य है। जैसी तू रूपवती है, वैसा ही वह गुणवन्त है। ये सब बातें सुनकर उसने खफा हो हाथों में चन्दन लगा, बुढ़िया के गालों में तमाचा मारा और कहने लगी कि कम्बख्त मेरे घर से निकल।

पर बुढ़िया अप्रसन्न हो उसी तरह से उठती-बैठती कुँवर के पास आई और सब वृत्तान्त कहा। राजकुमार सुनकर हका-बका हो गया। तब दीवान का बेटा बोला—महाराज! कुछ सोच न कीजिये, यह बात आपके ध्यान में नहीं आई। उसने कहा सच है, पर तू मुझे समझा कि मेरे जी को चैन होवे। उसने कहा जो दशों अँगुलियाँ चन्दन की भरकर मुँह पर मारीं तो उसने यह बताया कि दस रोज चाँदनी के बीतने पर अँधेरी रात में मिलूँगी। निदान दस रोज के बाद बुढ़िया ने उसकी खबर फिर जा कही। तब उसने केसर से तीन अँगुलियाँ भर उसके गाल पर मारीं और कहा निकल मेरे घर से। अन्त को बुढ़िया लाचार होकर वहाँ से चली और जो कुछ ब्योरा था सो सब राजपुत्र से आकर कहा। यह सुनते ही राजपुत्र शोकसागर में डूब गया। उसकी यह दशा देख फिर दीवान के बेटे ने कहा, अँदेशा न करो, इस बात का मुद्दा कुछ और है। वह बोला, मेरा जी बेचैन है। मुझसे जल्द कह। तब उसने कहा वह उस दशा में है, जो महीने-महीने औरतों की होती है। इसलिये और तीन दिन का वादा किया है। चौथे दिन वह तुम्हें बुलावेगी।

निदान जब तीन दिन हो चुके, तब बुढ़िया ने जाकर उसकी ओर से

कुशल-क्षेम पूछी। तब उसने बुढ़िया को अप्रसन्न हो पश्चिम ओर की खिड़की के पास लाकर निकाल दिया। फिर यह अहवाल बुढ़िया ने राजकुँवर से आकर कहा। वह सुनकर उदास हुआ। इतने में दीवान का पुत्र बोला कि इस बात का ब्योरा यह है कि आज रात के समय तुमको उसी खिड़की की राह से बुलाया है। यह सुनते ही राजपुत्र अति प्रसन्न हुआ। जब वह समय आया तब ऊदे रंग के जोड़े निकाल, चुन-बना, पगड़ी बाँध, कपड़े पहन, हथियार सज राजपुत्र तैयार हुआ। इस अर्से में दो पहर रात बीत गई। उस समय एक सन्नाकाल था। वे भी वहाँ से सून मारे चुपचाप चले आते थे। जब वे खिड़की के पास पहुँचे तब दीवान का बेटा बाहर खड़ा रहा और राजपुत्र खिड़की के भीतर गया, तो वहाँ देखता क्या है कि राजकन्या भी वहीं खड़ी राह देखती है। इतने म इन दोनों की चार आँखें हुई, तब राजकन्या हँसी और खिड़की बन्द कर राजकुमार को साथ ले रंगमहल में गई।

वहाँ जाकर कुँवर देखता क्या है कि जगह-जगह लखलखे रौशन और सहेलियाँ रंग-रंग की पोशाकें पहने, हाथ बाँधे अदब से अपने-अपने रुतबे से खड़ी हैं। एक तरफ फूलों की सेज बिछी है और उसी के पास अतरदान, पानदान, गुलाबपाश, चंगेरे, चौघरे सजे हुए करीने से धरे हैं। दूसरी तरफ चोवा, चन्दन, अरगजा, कस्तूरी, केसर कटोरियों में भरे हुए धरे हैं। कहीं अच्छी-अच्छी माजूनों की रंगीन डिब्बियाँ चुनी हैं। कहीं भाँति-भाँति के पकवान्न धरे हैं। सम्पूर्ण दर और दीवारें चित्रों से सँवारी हैं और उन पर ऐसी सूरतें बनी हुई हैं कि हरएक देखते ही मोहित हो जावे। निदान सारे ऐश व आराम के साज व सामान वहाँ पर वर्तमान थे। अजब समय का आलम है कि जिसका कुछ बयान नहीं हो सकता। उसी मकान में राजकुमारी पद्मावती ने राजकुँवर को ले जाकर बिठलाया और पाँव धुलवा, चन्दन बदन में लगा, फूलों के हार पहना, गुलाब छिड़क, अपने हाथ से पंखा झलने लगी।

इतने में कुँवर बोला कि हम तुम्हारे देखने ही से ठंढे हुए। इतनी मेहनत क्यों करती हो? तुम्हारे ये कोमल-कोमल हाथ पंखे के योग्य नहीं। पंखा हमें दो, तुम बैठो। पद्मावती बोली कि महाराज! आप बड़ी मेहनत करके हमारे वास्ते आये हैं। हमें आपकी सेवा करनी उचित है। तब एक सहेली ने राजकन्या के हाथ से पंखा लेकर कहा कि यह हमारा काम है। हम सेवा करें और तुम आपस में आनन्द करो। फिर वे वहाँ पान खाने और प्यार की

बातें करने लगे। इतने में भोर हुआ, राजकन्या ने उसे छिपा रक्खा। जब रात हुई तब फिर आपस में आनन्द होने लगा। इसी तरह से कितने एक दिन बीत गये। राजकुँवर जब जाने का इरादा करे, तब राजकन्या जाने न दे। इसी तरह से एक महीना बीत गया। तब तो राजपुत्र बहुत घबराया और चिन्तायुक्त हुआ।

एक दिन की बात यह है कि रात के समय अकेला बैठा हुआ वह जी में चिन्ता करता था कि देश, राज्य, पाट, घर सब तो छूटा ही था, साथ ही उसके एक ऐसा मित्र भी छूटा कि जिसके कारण यह सुख पाया। उससे भी महीने भर से मुलाक़ात नहीं हुई। वह अपने जी में क्या कहता होगा और क्या जानिये उस पर कैसी बीतती होगी? इसी सोच में बैठा हुआ था कि इतने में राजकन्या भी आ पहुँची और उसकी यह दशा देखकर पूछने लगी कि महाराज! तुम्हें क्या दुःख है, जो तुम ऐसे उदास बैठे हो, मुझसे कहो! तब राजपुत्र बोला कि हे सुमुखी! हमारा एक मित्र बहुत प्यारा दीवान का बेटा है। उसका कुछ हाल महीने भर से मालूम नहीं हुआ। वह ऐसा चतुर पण्डित, मित्र है कि उसी के गुणों से मैंने तुझे पाया और उसी ने तेरा सब भेद बताया।

यह सुन राजकन्या बोली कि महाराज! तुम्हारा चित्त तो वहाँ है, तुम यहाँ सुख कैसे करोगे। इससे बेहतर यह है कि मैं पकान्न, मिठाई सब कुछ तैयार करके भिजवाती हूँ और आप भी सिधारिये और अपने सुहृद को खिला पिला बहुत ढाढ़स कर फिर आ जाइये। यह सुनते ही राजकुँवर वहाँ से उठकर बाहर आया।

यहाँ राजकुमारी ने विष मिलवाकर और तरह-तरह की मिठाइयाँ बनवा कर भिजवाईं। कुँवर मन्त्री के पास जाकर बैठा ही था कि इतने में वे मिठाई आ पहुँचीं। प्रधान के बेटे ने पूछा, महाराज! यह मिठाई किस तरह से आई? राजपुत्र बोला, मैं वहाँ तेरी चिन्ता में उदास बैठा था कि राजकन्या ने आकर मेरी तरफ देखा और पूछा कि उदास क्यों बैठे हो, कुछ सबब उसका बताओ? तो मैंने तेरे भेद चतुराई के सब उससे बयान किये। तब यह हाल सुनके उसने मुझे तेरे पास आने की आज्ञा दी और यह तेरे वास्ते मिठाई भिजवाई है और [illegible] इसे खायेगा तो मेरा भी जी प्रसन्न होगा।

प्रधान [illegible] बेटा बोला कि तुम मेरे वास्ते विष लाये हो। इसी में कुशल हुई कि आपने नहीं खाई। महाराज! एक बात मेरी सुनिये कि रंडी अपने

दोस्त के दोस्त को नहीं चाहती। आपने यह अच्छा न किया जो मेरा नाम वहाँ लिया। यह बात सुनकर कुँवर बोला कि तुम ऐसी बात कहते हो कि जो कभी किसी से न हो। चाहे आदमी आदमी से न डरे परन्तु वह भगवान से डरेगा। इतना कह उसने उसमें से एक लड्डू कुत्ते के आगे डाल दिया। ज्योंही कुत्ते ने लड्डू खाया त्योंही वह छटपटा कर मर गया। यह दशा देख राजपुत्र अपने जी में क्रुद्ध हो कहने लगा कि ऐसी रंडी से मिलना उचित नहीं। आज तक तो मेरे दिल में उसकी प्रीति थी, पर अब मालूम हुआ। यह सुन दीवान का बेटा बोला कि महाराज! जो हुआ सो हुआ, परन्तु अब वह उपाय करना चाहिये कि जिससे उसको अपने घर ले चलें। राजपुत्र बोला, भाई! यह भी तुम्हीं से होगा।

दीवान के बेटे ने कहा कि पहिले एक काम कीजिये। आप फिर पद्मावती के पास जाइये और जो मैं कहूँ सो कीजिये। एक तो जाकर उसे बहुत-सा प्यार करो और जब वह सो जावे तब उसका गहना उतारकर, यह त्रिशूल उसकी बाईं जाँघ में मार वहाँ से तुरन्त चले आइये। यह सुन राजकुँवर रात को पद्मावती के पास गया और बहुत-सी मित्रता की बातें कर, दोनों मिलकर सो रहे; परन्तु मन में वही विचार कर रहा था। जब राजकन्या सो गई तब उसने सारा गहना उतार लिया और बाईं जाँघ में त्रिशूल मार अपने मकान को चला आया और सारा अहवाल प्रधान के बेटे से बयान कर सब गहना उसके आगे रख दिया। तब दीवान का पुत्र वह जेवर उठा, राजकुमार को साथ ले और योगी का वेष बना, एक श्मशान में जा बैठा। आप तो गुरु बना और उसे चेला बना, उससे कहा, तू बाजार में जाकर इस गहने को बेच। यदि कोई इसमें तुझे पकड़े तो उसे मेरे पास ले आना। उसकी बात सुन राजपुत्र ने जेवर को ले और शहर में जा, राजा की ड्योढ़ी के निकट एक सुनार को दिखाया। उसने देखते ही पहिचान कर कहा कि यह गहना राजकन्या का है, सच कह, तूने कहाँ पाया। यह उससे कह ही रहा था कि इतने में दस-बीस आदमी और इकट्ठे हो गये। निदान कोतवाल ने यह खबर सुन आदमी भेज राजकुमार और सुनार को जेवर समेत पकड़वा मँगाया और उस जेवर को देख उससे पूछा कि सच कह, यह तूने कहाँ से पाया। उसने कहा कि मुझको मेरे गुरु ने बेचने को दिया है। मुझे मालूम नहीं कि वे कहाँ से लाये। तब कोतवाल ने उसके गुरु को भी पकड़वा मँगाया और दोनों को जेवर समेत राजा के निकट लाकर तमाम अहवाल अर्ज किया।

यह माजरा सुनकर राजा योगी से पूछने लगा कि नाथजी! यह गहना तुमने कहाँ से पाया? योगी बोला कि महाराज! काली चौदस की रात को मैं मरघट में डाकिनी मन्त्र सिद्ध करने को गया था। जब वह डाकिनी आई तो मैंने उसका जेवर उतार लिया और उसकी बाईं जाँघ में त्रिशूल का निशान कर दिया। इस तरह से यह गहना मेरे हाथ आया है। राजा योगी की यह बात सुन महल में गया और योगी आसन पर बैठ गया। राजा ने रानी से कहा कि तू पद्मावती की बाईं जाँघ में देख तो निशान है कि नहीं और कैसा निशान है? रानी ने जाकर देखा तो त्रिशूल का दाग है। राजा से आकर कहा कि महाराज! तीन निशान बराबर हैं, पर ऐसा मालूम होता है कि मानो किसी ने त्रिशूल मारा है। यह बात सुन राजा ने बाहर आ, कोतवाल को बुलाकर कहा कि योगी को ले जावो। कोतवाल राजाज्ञा पाते ही योगी को बाहर ले गया और राजा अपने जी में चिन्ता कर कहने लगा कि घर का अहवाल व दिल का इरादा और जो कुछ नुकसान हो सो किसी के आगे प्रकट करना मुनासिब नहीं कि इतने में कोतवाल ने योगी को ला हाजिर किया। फिर योगी को राजा ने किनारे ले जा पूछा। गुसाईंजी धर्मशास्त्र में स्त्री के वास्ते क्या दण्ड लिखा है? तब योगी बोला कि महाराज! ब्राह्मण, गौ, स्त्री, लड़का और जो कोई अपने आसरे में हो, यदि इनमें से किसी से कुछ खोटा काम हो, तो उनके वास्ते यह दण्ड लिखा है कि उनको देशनिकाला दिया जाय।

यह सुनकर राजा ने पद्मावती को डोली में सवार करवा एक जंगल में छुड़वा दिया और इधर योगी को बिदा किया।

राजकुमार और दीवान का बेटा दोनों घोड़ों पर सवार हो उस वन में जा, पद्मावती को साथ ले अपने शहर को चले गये और थोड़े दिनों के बाद अपने बाप के पास जा पहुँचे। सब छोटे-बड़ों को बड़ी प्रसन्नता हुई और ये आपस में आनन्द भोगने लगे। इतनी बात कह वेताल ने राजा वीर विक्रमादित्य से पूछा कि उन चारों में पाप किसको हुआ? यदि तुम इस बात का न्याय न करोगे तो नरक में पड़ोगे। राजा विक्रम बोला कि राजा को पाप हुआ। वेताल ने कहा, राजा को किस तरह पाप हुआ? तब विक्रम ने उसे यह जवाब दिया कि दीवान के बेटे ने तो अपने स्वामी का काम किया और कोतवाल ने राजा का हुक्म माना और राजकुमार ने अपना मनोरथ हासिल किया। इससे यह पाप राजा को हुआ कि बिना बिचारे उसे देशनिकाला

दिया। इतनी बात राजा के मुख से सुन वेताल उसी वृक्ष पर जा लटका ॥१॥

दूसरी कहानी।

जब राजा ने देखा कि वेताल नहीं है तब फिर उलटा फिरा और उसी जगह पहुँच वृक्ष पर चढ़ उस मुर्दे को बाँध कन्धे पर रख के ले चला। तब वेताल बोला कि राजा! दूसरी कथा यों है कि यमुना के तीर धर्मस्थान नाम का एक नगर है। वहाँ गुणाधिप नाम का राजा और केशव नाम का ब्राह्मण था। ब्राह्मण यमुना के किनारे जप-तप किया करता था और उसकी बेटी का नाम मधुमालती था। वह बड़ी सुन्दर थी। जब वह ब्याह योग्य हुई तब उसके माता, पिता, भाई तीनों उसके ब्याह के विचार में थे। संयोगवश एक दिन उसका बाप किसी यजमान के साथ बारात में गया था और उसका भाई गाँव में गुरु के यहाँ पढ़ने गया। उसी दिन उसके घर एक ब्राह्मण का लड़का आया। उसकी माता ने उस लड़के का गुण-रूप देखकर कहा, मैं अपनी लड़की का ब्याह तुझसे करूँगी। उधर ब्राह्मण ने दूसरे को बेटी देने को कहा था और उसके बेटे ने जहाँ वह पढ़ने जाता था, वहाँ के एक ब्राह्मण से वचन हारा था कि मैं अपनी बहिन तुझे दूँगा।

कितने ही दिनों के पीछे वे दोनों पिता-पुत्र उन दोनों लड़कों को साथ ले आये और यहाँ तीसरा लड़का आगे से बैठा ही था। एक का नाम त्रिविक्रम, दूसरे का नाम वामन और तीसरे का नाम मधुसूदन था। तीनों रूप-गुण, विद्यावयस में बराबर थे। उनको देख ब्राह्मण चिन्ता करने लगा कि एक कन्या तीन वर, किसे दूँ? हम तीनों से वचन हारे हैं। अजब तरह की बात आन पड़ी, क्या कीजिए! ब्राह्मण इस शोक में बैठा था कि इतने में उस लड़की को साँप ने डसा और वह मर गई। यह खबर सुनके उसका बाप भाई व तीनों लड़के पाँचों ने मिलकर बड़ी दौड़-धूप कर, गुणी गारुड़िक जितने विष के झाड़नेवाले थे, उन सबको लाये। उन सबने उस लड़की को देखकर कहा, यह जीने की नहीं। यह सुन पहिला यों बोला कि पञ्चमी, छठ, अष्टमी, नवमी, चौदस इन तिथियों में साँप का काटा आदमी जीता नहीं। दूसरा बोला, शनैश्चर और मङ्गलवार का डसा हुआ भी जीता नहीं। तीसरा बोला रोहिणी, मघा, श्लेखा, विशाखा, मूल और कृत्तिका इन नक्षत्रों में चढ़ा हुआ विष उतरता नहीं। चौथा बोला इन्द्रिय, अधर, कपोल, गला, कोख, नाभी इन अङ्गों का काटा हुआ बचता नहीं। पाँचवाँ बोला इसको ब्रह्मा भी जिला

नहीं सकता हम किस गिनती में हैं। अब आप इसकी गति कीजिये। हम विदा होते हैं।

यह कहकर गुणी इत्यादिक तो चले गये और ब्राह्मण उस मुर्दे को ले जा श्मशान में फूँक घर लौट आया। उधर उसके पीछे उन तीनों लड़कों ने यह किया कि एक तो इनमें से उसकी जली हुई हड्डियों को चुन बाँधकर फकीर हो, वन वन की सैर को गया। दूसरा उसकी राख की गठरी बाँध वहीं झोपड़ी बना रहने लगा। तीसरा योगी हो, झोरी कन्था ले देश देश फिरने लगा। एक दिन वह किसी देश में एक ब्राह्मण के घर भोजन के लिए गया। वह गृहस्थ ब्राह्मण उसे देखकर कहने लगा अच्छा आज यहाँ ही भोजन कीजिए। यह सुनकर वह वहाँ बैठ गया। जिस समय रसोई तैयार हुई उस समय वह ब्राह्मण उसके हाथ-पाँव धुलाकर चौके में बिठा, आप भी उसके पास बैठ गया और उसकी ब्राह्मणी परोसने को गई। कुछ परोस हुई, कुछ परोसना बाकी था कि इतने में उसके छोटे लड़के ने रोकर अपनी माँ का आँचल पकड़ा। वह छुटाती थी और लड़का न छोड़ता था और ज्यों ज्यों यह उसे भुलाती थी, त्यों त्यों वह दूना रोता और हठ करता था। इसमें उस ब्राह्मणी ने अप्रसन्न हो लड़के को जलते चूल्हे में उठाकर फेंक दिया। वह लड़का जलकर राख हो गया। यह अहवाल जब उस ब्राह्मण ने देखा तो वह बिना खाये हुए उठ खड़ा हुआ। तब वह घरवाला बोला कि तू किस वास्ते भोजन नहीं करता? वह बोला कि जिसके घर में ऐसा राक्षसी काम हो, उसके घर में किस तरह से कोई भोजन करे? यह सुन वह गृहस्थ उठकर एक ओर अपने घर में गया और संजीवनी विद्या की पोथी ला, उसमें से एक मन्त्र निकाल और जपकर उसने लड़के को जिला दिया।

वह ब्राह्मण यह अद्भुत चरित्र देख अपने जी में सोचने लगा कि जो यह पोथी मेरे हाथ लगे, तो मैं भी अपनी प्यारी को जिलाऊँ। यह अपने मन में ठान रसोई खा वह वहीं रहा। जब रात हुई तब कितनी एक देर के पीछे सबने ब्यालू की और अपनी-अपनी जगह जा लेटे। वे इधर-उधर की आपस में बातें करते थे। यह ब्राह्मण भी एक तरफ जाकर पड़ रहा, परन्तु पड़ा-पड़ा जागता था। जब उसने जाना कि बड़ी रात गई और सब सो गये तब चुपका-चुपका उठ, धीरे-धीरे उसके घर में पैठ और उस पोथी को ले चल दिया। जिस श्मशान में उस ब्राह्मण की बेटी को जलाया था, वहाँ आ पहुँचा और उन दोनों ब्राह्मणों को वहीं पाया। वे बैठे हुए आपस में बातें करते थे। उन

दोनों ने भी उसे पहचान उसके पास आ उससे मुलाकात की और पूछा कि भाई तुम देश विदेश तो फिरे, पर यह कहो कि कोई विद्या भी सीखी या नहीं ?

वह बोला मैंने मृतसंजीवनी विद्या सीखी है । यह सुनते ही वे बोले जो सीखी हो तो हमारी प्यारी को जिलाओ । उसने कहा कि राख और हाड़ों का ढेर करो तो मैं जिला दूँ । उन दोनों ने राख और हड्डियाँ इकट्ठी कर दीं, तब उसने पोथी में से एक मन्त्र निकाल जपा । वह कन्या जी उठी । तब उन तीनों को कामदेव ने ऐसा अन्धा किया कि वे आपस में झगड़ने लगे । इतनी बात कहकर वेताल बोला, अय राजा ! यह बता कि वह स्त्री किसकी हुई ? राजा विक्रम बोला कि जो मढ़ी बाँधकर रहा था उसकी । वेताल बोला कि जो वह हाड़ न रखता तो वह किस तरह जीती और दूसरा विद्या न सीख आता तो वह क्योंकर उसे जिलाता ? राजा ने जवाब दिया कि जिसने उसकी हड्डियाँ रक्खी थीं वह तो उसके बेटे की जगह हुआ और जिसने जीवदान दिया वह मानो उसका बाप हुआ । इससे वह उसी की जोरू हुई कि जो राख समेत झोंपड़ी बाँध वहाँ रहा । यह जवाब सुनकर वेताल फिर उसी वृक्ष में जा लटका । राजा भी उसी के पीछे-पीछे जा पहुँचा और उसे बाँध काँधे पर रख फिर ले चला ॥ २ ॥

तीसरी कहानी ।

वेताल बोला कि हे राजा ! बर्दवान नाम का एक नगर है । उसमें रूपसेन नामक एक राजा था । एक दिन का हाल है कि वह राजा अपनी ड्योढ़ी के निकट किसी मकान में बैठा था । उस समय दरवाजे के बाहर से कुछ ऊपरी लोगों की आवाजें आने लगीं । राजा बोला कि दरवाजे पर कौन है और क्या हो रहा है ? दरबान ने जवाब दिया कि महाराज ! आपने यह भली बात पूछी । दौलतमन्द की ड्योढ़ी जान धन के लिए बहुतेरे आदमी आ बैठते हैं और भाँति-भाँति की बातें करते हैं । उन्हीं लोगों का यह शोर है । यह सुन राजा चुप हो रहा ।

इतने में दक्षिण दिशा से एक वीरवर नाम का राजपूत चाकरी करने की आश किये राजा की ड्योढ़ी पर आया । दरबान ने उसका वृत्तान्त मालूम करके राजा से कहा, महाराज ! एक मनुष्य हथियारबन्द चाकरी करने के आसरे से आया है । वह दरवाजे पर खड़ा है । यदि महाराज की आज्ञा पाये तो वह सम्मुख आये । यह सुन राजा ने आज्ञा दी कि ले आ । वह उसे जाकर ले आया । राजा ने पूछा अय राजपूत ! तेरे तईं रोज खर्च को क्या कर दूँ ।

यह सुनकर वीरवर बोला कि यदि हजार तोले सोना आप रोज मुझे दो, तो मेरी गुजर हो। राजा ने पूछा तुम्हारे साथ कितने लोग हैं? उसने कहा एक स्त्री, दूसरा बेटा, तीसरी बेटी, चौथा मैं। पाँचवाँ हमारे साथ कोई नहीं। उसकी यह बात सुन राजा की सभा के लोग सब मुँह फेर-फेर हँसने लगे। परन्तु राजा ने अपने जी में सोचा कि इसने बहुत धन क्यों माँगा? फिर आप ही अपने मन में समझा कि बहुत धन दिया हुआ किसी न किसी दिन सफल होगा। यह विचार राजा ने भण्डारी को बुलाकर कहा कि हमारे खजाने से हजार तोले सोना इस वीरवर को रोज दिया करो। यह परवानगी सुन वीरवर ने हजार तोले सोना उस दिन का ले अपनी जगह ला और दो हिस्सा कर आधा तो ब्राह्मणों को बाँटा और आधे के फिर दो भाग कर एक भाग अतिथि, वैरागी, वैष्णव, संन्यासियों को बाँट दिया और बाकी जो हिस्सा रहा उसका खाना पकवा गरीबों को खिला दिया। बाकी जो कुछ रहा वह आप खाया। इसी तरह से वह नित्य स्त्री पुत्रों समेत अपनी गुजर करता था और सन्ध्या के समय रोज ढाल तलवार ले राजा के पलँग की चौकी में जा हाजिर रहता।

राजा जब सोते-सोते चौंककर पुकारता कि कोई हाजिर है तो यही जवाब देता कि वीरवर हाजिर है, जो हुक्म। इसी तरह राजा जब पुकारता तो यही जवाब देता और जो आज्ञा राजा की होती सो यही बजा लाता। इसी तरह धन के लालच से रात भर सचेत रहता। बल्कि खाते, पीते, सोते, जागते, उठते, बैठते, चलते, फिरते आठ पहर अपने मालिक की याद में रहता। रीति यह है कि कोई किसी को बेचता है तब वह बिकता है; पर चकरिया चाकरी करके अपने को आप बेचता है और जब बिका तो ताबेदार हुआ। जब परवश हुआ तब उसे सुख कहाँ? मशहूर है कि कैसा ही चतुर, बुद्धिमान् पण्डित हो; परन्तु जिस समय वह अपने मालिक के सामने होता है, तो डर के मारे गूँगे के बराबर चुप हो रहता है। जब तक वह स्वतन्त्र है, चैन में है। इसी वास्ते पण्डित लोग कहते हैं कि सेवाधर्म करना योगधर्म से भी कठिन है।

एक दिन का वृत्तान्त है कि रात के समय मरघट की ओर से किसी स्त्री के रोने का शब्द आया। उसे सुनके राजा ने पुकारा कोई हाजिर है। वीरवर सुनते ही बोला, हाजिर, जो आज्ञा। राजा ने हुक्म दिया कि जहाँ से स्त्री के रोने की आवाज आती है, वहाँ जाओ और उससे रोने का कारण पूछकर जल्द आओ। राजा उसे यह आज्ञा दे मन में कहने लगा कि जिस किसी

को चाकर अपना अजमाना हो, तो बेवक्त उससे काम को कहे। यदि वह हुक्म बजा लावे तो जानिये नौकर काम का है और जो तकरार करे, तो जानिये नकारा है। इसी तरह से भाइयों को और मित्रों को बुरे समय में परखे और स्त्री को निर्धनता में जाँचे। निदान वीरवर यह हुक्म पाकर उसके रोने की आवाज पर चला और राजा भी उसका साहस देखने के लिए काले कपड़े पहन कर उसके पीछे-पीछे छिपा हुआ चला।

इतने में वीरवर उस मरघट में जहाँ स्त्री रोती थी जा पहुँचा और देखता क्या है कि एक स्त्री अति सुन्दर सिर से पाँव तक गहने से लदी हुई, ढाड़ें मार-मार रो रही है। कभी नाचती है, कभी कूदती, कभी दौड़ती है, परन्तु उसकी आँखों से आँसू एक नहीं आता। वह सिर पीट और हाय हाय कर पृथ्वी पर पटकनियाँ खाती है। उसका यह हाल देख वीरवर ने पूछा कि तू कौन है और क्यों इतना रोती पीटती है, तुझ पर क्या दुःख है? तब उस स्त्री ने उत्तर दिया कि मैं राजलक्ष्मी हूँ। वीरवर ने कहा तू किस कारण रोती है? तब उसने अपनी व्यवस्था वीरवर से कहनी प्रारम्भ की। वह कहने लगी राजा विक्रम के घर में शूद्रकर्म होता है, इससे उसके घर में अलक्ष्मी आवेगी और मैं उसके घर से चली जाऊँगी और एक महीने के पीछे राजा निपट दुःख पा के मर जावेगा, इस दुःख से रोती हूँ। मैंने उसके घर में बहुत सुख किया है, इस वास्ते पछिताती हूँ और यह बात किसी तरह से झूँठ न होवेगी।

वीरवर ने पूछा उसका कोई ऐसा उपाय भी है कि जिससे राजा बचे और सौ वर्ष जीवे। स्त्री बोली कि यहाँ से पूर्व ओर एक योजन पर एक देवी का मन्दिर है, जो तू उस देवी को अपने बेटे का शीश अपने हाथ से काटकर चढ़ा दे तो राजा सौ वर्ष इसी तरह से राज्य करे और किसी तरह का दुःख राजा को न हो। यह बात सुनते ही वीरवर अपने घर को चला और राजा भी उसके पीछे हो लिया। जब वह घर में आया तब अपनी स्त्री को जगाकर उसने सब वृत्तान्त कहा। उसने यह हाल सुन जगाया तो बेटे को परन्तु जागी बेटी भी। तब उस स्त्री ने लड़के से कहा कि बेटा! तुम्हारे सीस देने से राजा का जी बचता है और राज्य भी स्थित रहता है। यह सुन वह बालक बोला माता एक तो आपकी आज्ञा, दूसरे स्वामी का कार्य, तीसरे यह देह देवता के काम आवे, तो इससे अच्छी कोई बात दुनिया में नहीं है। मेरे निकट अब इस काम में देर करनी उचित नहीं। मसल है कि पुत्र अपने वश का,

काया नीरोग, विद्या से लाभ, मित्र चतुर, नारी आज्ञाकारी—यदि ये पाँच बातें आदमी को मयस्सर हों, तो सुख की देनेवाली और दुःख की दूर करनेवाली हैं। यदि आकर बेमन का, राजा कृपण, मित्र कपटी, स्त्री आज्ञा न माननेवाली हो, तो ये चार बातें आराम की दूर करनेवाली और दुःख की देनेवाली हैं।

वीरवर अपनी स्त्री से कहने लगा जो तू प्रसन्नता से अपने लड़के को दे तो मैं ले जाऊँ और राजा के लिये देवी के आगे बलि दूँ। वह बोली कि मुझे बेटा, बेटी, भाई, बन्धु, मा, बाप किसी से कुछ काम नहीं। मेरी गति तुम्हीं से है और धर्मशास्त्र में भी यही लिखा है कि स्त्री दान व्रत से शुद्ध नहीं होती है, वरन लँगड़ा, लूला, गूँगा, बहिरा, अन्धा, काना, कोढ़ी, कुबड़ा कैसा ही उसका स्वामी हो, उसी की सेवा करने से शुद्ध होती है। यही उसका धर्म है। यदि स्त्री किसी तरह का दुनिया में धर्म कर्म करे और पति की आज्ञा न माने तो वह नरक में पड़े। फिर उसका बेटा बोला पिता, जिस आदमी से स्वामी का काम होवे, जगत् में उसी का जीना सफल है और इससे दोनों जहान में भला है। फिर उसकी बेटी बोली जो माता लड़की को विष देवे, बाप पूत को बेचे और राजा सर्वस्व छीन लें तो पनाह किसकी लेवे ? निदान चारों आपस में विचार करके देवी के मन्दिर में गये और राजा भी छिपकर उनके पीछे चला। जब वीरवर वहाँ पहुँचा, तो मन्दिर में जा देवी की पूजाकर हाथ जोड़ कहने लगा कि हे देवि! मेरे पुत्र के बलि देने से राजा की सौ वर्ष की उमर हो। इतना कह ऐसा खाँड़ा मारा कि लड़के का सीस पृथ्वी पर गिर पड़ा।

भाई का मरना देख उस लड़की ने अपने गले में एक खड्ग ऐसा मारा कि मुण्ड रुण्ड से जुदा होकर गिर पड़ा। बेटा बेटी का मरा देख वीरवर की स्त्री ने भी तलवार अपनी गर्दन पर मारी कि धड़ से सीस जुदा हो गया। उन तीनों का मरना देख वीरवर अपने मन में चिन्ता कर कहने लगा कि जब स्त्री लड़के ही मर गये तो नौकरी किसके वास्ते करूँगा और सोना राजा से ले किसे दूँगा। यह सोचकर एक खड्ग अपनी गर्दन पर ऐसा मारा कि तन से सिर जुदा हो गया! उन चारों का मरना देख राजा ने अपने मन में कहा कि मेरे वास्ते इसकी और इसके कुटुम्ब की जान गई। अब ऐसे राज्य करने को धिक्कार है कि जिस राज्य के लिए एक का सर्वनाश होवे और एक राज्य करे। ऐसा करना धर्म नहीं है। यह विचारकर राजा ने चाहा कि खाँड़ा मार मरूँ। इतने में देवी ने आके हाथ पकड़ा और कहा कि पुत्र! मैं तेरे साहस पर प्रसन्न

हुई। जो तू मुझसे वर माँगे सो मैं दूँ। राजा ने कहा, माता! जो तू प्रसन्न हुई है, तो इन चारों को जिला दे। देवी ने कहा यही होवेगा और यह कहते ही भवानी ने पाताल से अमृत ला चारों को जिला दिया। उसके पीछे राजा ने अपना आधा राज्य वीरवर को बाँट दिया। इतनी बात कह वेताल बोला, धन्य है उस सेवक को कि जिसने स्वामी के लिए अपने जीव और कुटुम्ब का मोह न किया और धन्य है उस राजा को कि जिसने राज्य और अपने जीव का कुछ लालच न किया। अय राजा! मैं तुझसे यह पूछता हूँ कि इन चारों में किसका सत सरस हुआ? तब राजा विक्रम बोला कि राजा का सत अधिक हुआ। वेताल बोला क्यों? राजा ने जवाब दिया कि स्वामी के वास्ते चाकर को जी देना उचित ही है, क्योंकि उसका यही धर्म है। लेकिन राजा ने जो चाकर के लिए राजपाट छोड़ जान को तिनके के बराबर जाना, इस कारण राजा का सत् सिवाय हुआ। इतनी बात सुन वेताल फिर उसी श्मशान के वृक्ष में जा लटका॥ ३ ॥

चौथी कहानी।

राजा वहाँ जा फिर वेताल को बाँधकर ले चला। तब वेताल बोला कि अय राजा! भोगवती नाम एक नगरी है, वहाँ का राजा रूपसेन है। उसके पास चूड़ामणि नामक एक तोता है। एक दिन उस तोते से राजा ने पूछा कि तू क्या-क्या जानता है? तोता बोला कि महाराज! मैं सब कुछ जानता हूँ। राजा ने कहा अच्छा जो तू जानता है तो बतला कि मेरे योग्य नायिका कहाँ है? तोते ने कहा महाराज! मगधदेश का मगधेश्वर नाम राजा है और उसकी बेटी का नाम चन्द्रावती है। तुम्हारा ब्याह उसके साथ होवेगा। वह अति सुन्दरी है और बड़ी पण्डिता है। राजा ने तोते की यह बात सुनकर एक चन्द्रकान्त नाम ज्योतिषी को बुलाकर पूछा कि हमारा ब्याह किस कन्या से होवेगा? उसने भी अपनी ज्योतिषविद्या से मालूम करके कहा कि चन्द्रावती नाम एक कन्या है; उसके साथ तुम्हारा ब्याह होवेगा। यह बात सुन राजा ने एक ब्राह्मण को बुलवा और उसे सब कुछ समझा मगधेश्वर के पास जाने को कहा और यह भी कहा कि यदि हमारे ब्याह की बात पकी कर आओगे, तो हम तुम्हें प्रसन्न कर देंगे। यह बात सुन ब्राह्मण राजा से बिदा हो चला।

वहाँ मगधेश्वर की बेटी के पास एक मैना थी। उसका नाम मदनमञ्जरी था। इसी तरह से उस राजकन्या ने भी एक दिन मदनमञ्जरी से पूछा कि मेरे योग्य पति कहाँ है? तब शारिका बोली कि भोगवती नगरी का राजा रूपसेन

है। सो तेरा पति होगा। निदान अनदेखे एक पर एक मोहित हो गये थे। थोड़े दिनों पीछे वह ब्राह्मण वहाँ जा पहुँचा और मगधराज से अपने राजा का संदेशा कहा। उसने भी उसकी बात मानी और अपना एक ब्राह्मण बुलवा उसे टीका और रसूम की चीजें सौंप उसी ब्राह्मण के साथ भेजा और यह कह दिया कि तुम हमारी ओर से जाकर विनती कर, राजा को तिलक देके जल्दी चले आओ। जब तुम आओगे तब हम ब्याह की तैयारी करेंगे। निदान ये दोनों ब्राह्मण वहाँ से चले। कितने एक दिनों में राजा रूपसेन के पास जा पहुँचे और सब वृत्तान्त वहाँ का कहा। यह सुन, राजा प्रसन्न हो और सब तैयारी कर ब्याह करने को चला। थोड़े दिनों के पीछे उस देश में पहुँचा, ब्याह कर और दान दहेज ले राजा से बिदा हो अपने देश को चला। राजकन्या ने भी चलते समय मदनमञ्जरी का पिंजरा साथ ले लिया। कितने एक दिनों के पीछे राजा अपने देश में आ पहुँचे और सुख से अपने मन्दिर में रहने लगे।

एक दिन की बात है कि दोनों पिंजरे तोता मैना के गद्दी के पास धरे हुए थे। राजा रानी आपस में कहने लगे कि अकेले रहने से किसी का दिन नहीं कटता। इससे उचित है कि तोता मैना का आपस में ब्याह कर दोनों को एक पिंजरे में रखिये तो ये भी सुख से रहें। इस तौर की बातें कर एक बड़ा सा पिंजरा मँगवा दोनों को उसमें रक्खा। थोड़े दिनों के बाद राजा रानी आपस में बैठ कुछ बातें करते थे कि तोता मैना से कहने लगा कि दुनिया में भोग करना मुख्य है और जिसने जगत् में पैदा होकर भोग नहीं किया उसका जन्म वृथा गया। इससे तू मुझे भोग करने दे। यह सुनके शारिका बोली कि मुझे पुरुष की इच्छा नहीं। तब उसने पूछा कि क्यों? मैना बोली, पुरुष पापी, अधर्मी, दगाबाज और स्त्रीहत्या करनेवाले होते हैं। यह बात सुन तोता बोला कि नारी भी दगाबाज, झूठी, मूर्ख, लालची, हत्यारी होती हैं। जब इस तरह से दोनों झगड़ने लगे तो राजा ने पूछा कि तुम दोनों किस वास्ते आपस में झगड़ते हो? मैना बोली महाराज! पुरुष पापी और स्त्रीघातक होते हैं। इस वास्ते मुझे पुरुष की चाह नहीं। महाराज! मैं एक बात कहती हूँ आप सुनिये मर्द ऐसे होते हैं।

इलापुर नाम एक नगर था। वहाँ महाधन नामक एक सेठ रहता था। उसके संतान न होती थी। इससे वह हमेशा तीर्थ व्रत करता और नित्य पुराण सुनता; ब्राह्मणों को बहुत सा दान दिया करता था। कितने एक दिनों

में भगवान् की इच्छा से उस सेठ के एक लड़का पैदा हुआ। उसने बड़ी धूम से उसका ब्याह किया और ब्राह्मणों, भाटों और भूखे, प्यासे, कंगालों को बहुतसा दान दिया। जब वह बालक पाँच वर्ष का हुआ तब उसे पढ़ने को बिठाया। वह घर से तो पढ़ने को जाता पर जाकर लड़कों में जुआ खेला करता। थोड़े दिनों के बाद वह सेठ मर गया और लड़का स्वतन्त्र हो दिन को तो जुआ खेलता और रात को वेश्यागमन करता। इसी तरह से कई वर्षों में अपना सारा धन खो लाचार हो देश से निकल खराब होता हुआ चन्द्र-पुर नगर में जा पहुँचा। वहाँ हेमगुप्त नाम साहूकार था। उसके बहुत दौलत थी। वह उसके पास गया और अपने बाप का नाम निशान बताया। यह सुनते ही हेमगुप्त प्रसन्न हुआ और उससे उठकर मिला और पूछा तुम्हारा आना क्योंकर हुआ। तब वह बोला कि मैं जहाज ले एक द्वीप में सौदागरी को गया था और वहाँ जा उस माल को बेच और माल की भरती कर जहाज ले अपने देश को चला। अचानक एक ऐसा तूफान आया कि जहाज तबाह हो गया और मैं एक तख्ते पर बैठकर बहता-बहता यहाँ तक आ पहुँचा हूँ। परन्तु लज्जा आती है कि माल द्रव्य तो सब जाता रहा अब मैं इस दशा से अपने शहर के लोगों को जाकर क्या मुँह दिखाऊँ। निदान जब इस तरह की बातें इसने उसके आगे कीं तब वह भी मन में विचारने लगा कि मेरी फिक्र भगवान् ने घर बैठे ही मिटा दी और ऐसा संयोग भगवान् ही की कृपा से बन पड़ता है। अब देर करनी मुनासिब नहीं। इससे उचित यह है कि कन्या के हाथ पीले कर दिये जायँ। जो कुछ इस समय हो सो उत्तम है और कल्ह की किसे खबर है। ऐसा अपने जी में मनसूबा बाँध सिठानी के पास आ कहने लगा कि एक सेठ का लड़का आया है जो तुम कहो तो रत्नावती का ब्याह उससे कर दें। सिठानी सुन प्रसन्न हो बोली कि शाहजी! ऐसा संयोग जब भगवान् बनाता है तब बनता है। क्योंकि घर बैठे मन की कामना पूरी हुई। इससे उचित यह है कि देर मत करो और जल्द पुरोहित को बुलवा लग्न सुधवाय ब्याह कर दो।

उस सेठ ने ब्राह्मण को बुलवा, शुभ लग्न मुहूर्त ठहरा और कन्यादान कर, बहुत सा दहेज दिया। जब ब्याह हो चुका तब वे वहाँ आनन्द से रहने लगे। फिर कितने ही दिनों के पीछे शाह की बेटी से उसने कहा, हमें तुम्हारे देश में आये हुए बहुत दिन हुए और अपने घरबार की कुछ खबर नहीं पाई। इससे चित्त हमारा बहुत उदास रहता है। हमने सब वृत्तान्त अपना तुमसे कहा

अब तुम्हें यह चाहिये कि अपनी माँ से इस तरह समझाकर कहो कि वे राजी हो हमें बिदा करें ; तो हम अपने शहर को जावें। तुम्हारी इच्छा हो तो तुम भी चलो। तब उसने अपनी माँ से कहा कि बालम अपने देश को बिदा हुआ चाहते हैं। अब तुम भी वह करो कि जिसमें उनके जी को दुःख न होवे। सिठानी ने अपने स्वामी के पास जाकर कहा तुम्हारा दामाद अपने घर जाने को बिदा माँगता है। यह सुनकर सेठ बोला—अच्छा बिदा कर देंगे। क्योंकि बिराने पूत पर अपना कुछ वश नहीं चलता; जिसमें उसकी प्रसन्नता होगी, वही हम करेंगे।

यह कह अपनी बेटी को बुलाकर पूछा तुम अपनी बात कहो। ससुराल जाओगी या नैहर में रहोगी? इसमें लड़की ने लज्जा करके जवाब न दिया, उलटी फिर आई और अपने पति से आकर कहा, हमारे माता पिता कह चुके हैं कि जिसमें उनकी प्रसन्नता होगी वह हम करेंगे। तुम हमें मत छोड़ जाइयो। निदान उस सेठ ने अपने दामाद को बुलाकर बहुतसी दौलत देकर बिदा किया और लड़की का भी डोला एक दासी समेत साथ कर दिया। तब वह वहाँ से चला। जब एक जङ्गल में पहुँचा तो उसने स्त्री से कहा कि यहाँ बहुत डर है जो तुम अपना सब गहना उतार दो, तो हम अपनी कमर में बाँध लें। फिर जब आगे शहर आवेगा तब तुम पहिन लेना। उसने सुनते ही सब जेवर उतार दिया। उसने जेवर ले कहारों को कुछ धन दे बिदा कर दासी को मार कुवें में डाल दिया और स्त्री को भी कुवें में ढकेल अपने देश को चला गया। इतने में एक मुसाफिर उस राह से जा रहा था। वह रोने की आवाज सुनकर खड़ा हो अपने जी में कहने लगा कि इस जङ्गल में आदमी के रोने की आवाज कहाँ से आती है? यह विचार वह उस तरफ को चला जिस तरफ से रोने की आवाज आ रही थी। वहाँ एक कुआँ दृष्टि पड़ा। उसमें झाँका तो देखता क्या है कि स्त्री रोती है। उसको निकाल वृत्तान्त पूछने लगा कि तू कौन है और किस तरह से इसमें गिरी? यह सुनके उसने कहा कि मैं हेमगुप्त सेठ की बेटी हूँ और अपने पति के साथ उसके देश को जाती थी। इतने में चोरों ने आ घेरा और मेरी दासी को मार मुझे कुवें में डाल दिया और गहना समेत मेरे पति को बाँधकर ले गये। न उनको मुझे खबर है न मेरी उन्हें।

यह सुन वह बटोही उसे साथ ले आया और उसे उस सेठ के द्वार पर पहुँचा गया। यह अपने माँ बाप के पास गई। वे उसे देखकर पूछने लगे कि

तेरी क्या गति हुई ? उसने कहा हमें राह में आकर चोरों ने लूटा और दासी को मार कुवें में डाल मुझे भी एक कुवें में ढकेल दिया और मेरे पति को गहने समेत बाँध के ले चले। जब उससे और धन माँगने लगे, तब उसने कहा जो कुछ था सो तुमने लिया, अब मेरे पास क्या है। आगे मुझे खबर नहीं कि उसे मारा या छोड़ा। तब उसका बाप बोला तू फिक्र मत कर तेरा स्वामी जीता है। भगवान् चाहे तो थोड़े दिनों में आ मिलेगा। क्योंकि चोर धन के ग्राहक होते हैं, जीव के ग्राहक नहीं। निदान उस सेठ ने जो जो गहना उसका गया था उसके बदले और देकर बहुत दिलासा दी। उधर दामाद भी अपने घर पहुँच सब जेवर बेच दिन रात वेश्यारमण और जुआ खेलने लगा। यहाँ तक कि सब रुपये तमाम हुए और रोटी को मुहताज हुआ। अन्त को जब बहुत दुःख पाने लगा तब अपने दिल में एक दिन उसने विचारा कि ससुराल जाकर यह बहाना कीजिये कि तुम्हारे नवासा पैदा हुआ है उसकी बधाई देने को मैं आया हूँ। यह बात जी में ठानकर वह चला।

कई दिनों में वहाँ जा पहुँचा। जब उसने चाहा कि घर में पैठूँ वैसे ही सामने से उसकी स्त्री ने देखा कि मेरा पति आता है, ऐसा न हो कि अपने जी में डरकर फिर जावे। इससे उसने निकट आकर कहा, स्वामी तुम अपने जी में किसी बात की परवाह मत करो। मैंने अपने बाप से कहा है कि चोरों ने आके दासी को मार डाला और मेरा जेवर उतरवा मुझे कुवें में डाल मेरे पति को बाँध ले गये। यही बात तुम भी कहियो। कुछ चिन्ता मत करो। घर तुम्हारा है और मैं दासी हूँ। यह कहकर वह घर में चली गई। यह उस सेठ के पास गया। उसने उठकर गले लगा सब अहवाल पूछा। जिस तरह उसकी स्त्री समझा गई थी इसने उसी तरह से कहा। सारे घर में प्रसन्नता हुई। सेठ ने उसे स्नान करवा, रसोई जिवाँ, बहुत सा निहोरा कर कहा कि यह घर तुम्हारा है। आनन्द से रहो। यह वहाँ रहने लगा। निदान कितने एक दिनों के बाद रात के समय सेठ की बेटी गहना पहने हुए उसके पास सोने को आई और सो गई। जब दो पहर रात गई तब इसने देखा कि यह गाफिल सो गई है। बस एक छुरी ऐसी उसके गले में मारी कि वह मर गई और सारा गहना उसका उतार उसने अपने देश की राह ली। इतनी बात कह मैना बोली कि महाराज! यह मैंने अपनी आँखों से देखा है इस वास्ते मुझे पुरुष से कुछ काम नहीं। देखो तो पुरुष की जात कैसी बटमार होती है। कौन ऐसे से मित्रता कर अपने घर में साँप पाले। महाराज! आप

इसे विचारें कि उस स्त्री ने क्या अपराध किया था। यह सुनकर राजा ने कहा ऐ तोते! स्त्री में ऐब क्या है। तू मुझसे कह। तब वह कीर बोला कि महाराज! सुनिये।

कञ्चनपुर नगर में एक सागरदत्त नामक सेठ था। उसके बेटे का नाम श्रीदत्त था और दूसरे नगर का नाम श्रीविजयपुर था। वहाँ का सोमदत्त नाम सेठ था। उसकी बेटी का नाम जयश्री था। वह श्रीदत्त को ब्याही थी। श्रीदत्त किसी मुल्क में सौदागरी के वास्ते गया था। इससे जयश्री अपने माता पिता के यहाँ रहती थी। जब श्रीदत्त बारह वर्ष व्यतीत होने पर भी न आया और वह यहाँ युवा हुई, तब एक दिन सखी से कहने लगी कि ऐ बहिन! मेरा यौवन यों ही जाता है। संसार का सुख मैंने अब तक कुछ नहीं देखा। यह बात सुनके सखी ने उससे कहा तू अपने जी में धीरज धर भगवान् चाहेगा तो तेरा भर्तार जल्द आ मिलेगा। इस बात को सुनकर जयश्री अटारी पर चढ़ झरोखे से झाँकी, तो देखती क्या है कि एक जवान चला आता है। जब निकट आया तो इसकी और उसकी एकाएकी चार नजरें हुईं। दोनों का दिल मिल गया। तब उसने अपनी सखी से कहा कि इस पुरुष को मेरे पास ले आ। यह सुन सखी ने उससे जाकर कहा कि सोमदत्त की कन्या ने तुझे एकान्त में बुलाया है। पर तुम मेरे घर आइयो और अपने घर का पता उसे बता दिया। उसने कहा कि रात को मैं आऊँगा। सखी ने यह सेठ की लड़की से आकर कहा कि उसने रात के समय आने को कहा है। यह सुनके जयश्री ने सखी से कहा कि तू अपने घर में जा। जब वह आवे तब मुझे खबर करना तो मैं भी घर से सुचित्त हो चलूँगी। सखी उसकी बात सुनके अपने घर गई और द्वार पर बैठ के उसकी राह ताकने लगी। इतने में वह आया। इसने उसे अपने घर में बिठाकर कहा, तुम यहाँ बैठो, मैं जाकर तुम्हारी खबर करती हूँ और आकर जयश्री से कहा कि तुम्हारा प्रीतम आन पहुँचा है। यह सुनके उसने कहा किंचित् ठहर जा घर के लोग सो जावें तो मैं चलूँ। कितनी एक देर के बाद जब आधी रात का अमल हुआ और सब सो गये तब यह चुपके से उठकर उसके साथ चली और एक क्षण में वहाँ आन पहुँची। दोनों ने उसके घर में प्रसन्नतापूर्वक मुलाकात की। जब चार घड़ी रात बाकी रही, तब जयश्री उठकर अपने घर में आकर चुपचाप सो रही और वह भी सबेरे अपने घर को गया। इसी तरह से कितने एक दिन बीत गये। निदान उसका पति भी विदेश से

अपनी ससुराल में आया। तब इसने अपने पति को देख जी में चिन्ता करके सखी से कहा कि इस सोच में मेरा जी है, क्या करूँ ? किधर जाऊँ ? मेरी नींद, भूख, प्यास सब बिसर गई। न ठंडे से रुचि है न गरम से। जो कुछ हाल अपने चित्त का था सो सब कहा। निदान ज्यों त्यों करके दिन तो कटा, पर संध्या के समय जब उसका पति ब्यालू कर चुका तब उसकी सास ने एक जुदे चौबारे में सेज बिछवाकर कहा कि तुम वहाँ जाकर आराम करो। फिर अपनी बेटी से कहा कि तू जाकर अपने पति की सेवा कर। वह इस बात को सुन नाक, भौंह चढ़ा चुपकी हो रही। तब उसकी माँ ने डाटकर उसके पास भेजा तो बेवश होके वहाँ गई और मुँह फेरकर पलँग पर लेट रही। वह ज्यों ज्यों उससे नेह की बातें करता था, त्यों त्यों उसे अधिक दुःख होता था। फिर तरह-तरह के वस्त्र-आभूषण जो हरएक मुकाम से उसके वास्ते लाया था सो दिये और कहा कि इसे पहनो। तब तो उसने और खफा हो भौंह तान मुँह फेर लिया। निदान यह भी लाचार हो सो रहा। क्योंकि हारा माँदा राह का था। परन्तु उस स्त्री को अपने यार की याद में नींद न आई। जब वह समझी कि यह नींद से अचेत हुआ तब वह धीरे-धीरे उठ अँधेरी रात में निडर अपने दोस्त के मकान को चली।

राह में एक चोर ने उसको देखकर अपने मन में विचारा कि यह स्त्री गहना पहने हुए आधी रात के समय अकेली कहाँ जाती है। यह विचार वह उसके पीछे हो लिया। निदान ज्यों त्यों कर यह अपने यार के मकान में पहुँची। वहाँ यार को साँप काट गया था वह मरा पड़ा था। परन्तु इसने जाना कि सोता है। इससे विरह की आग बुझाने के लिये उससे लिपटकर प्यार करने लगी और चोर दूर से यह तमाशा देखने लगा। वहाँ एक पीपल के वृक्ष पर पिशाच भी बैठा हुआ यह तमाशा देखता था। पिशाच के मन में आया कि मृतक के बदन में पैठ इससे भोग करना चाहिये। यह विचार उसके बदन में पैठ उसने भोग किया। अन्त में दाँतों से उस स्त्री की नाक काट वह उसी वृक्ष पर जा बैठा। चोर ने यह सब हाल देखा और वह बेवश हो उसी भाँति लहू से चुचुहाती हुई अपनी सखी के पास गई और सब माजरा कहा। तब सखी बोली कि तू अपने पति के पास जल्द जा कि जिसमें सूर्य उदय होने न पाये और वहाँ जाकर ढाढ़ मारके रोइयो। जो कोई तुझसे पूछे तो कहना कि इसने मेरी नाक काट ली है। सखी की यह बात सुनते ही वह तुरन्त जा ढाढ़ें मार-मार रोने लगी। इसके रोने की आवाज सुन सारे कुटुम्ब के लोग आये तो देखते क्या

हैं कि उसके नाक नहीं है, नकटी बैठी है। तब वे बोले ऐ निर्लज्ज, पापी, निर्दयी, क्रूरमति! बिना अपराध किये इसकी नाक क्यों काटी? वह भी यह चिन्ता कर अपने जी में कहने लगा कि चञ्चल, काला साँप, शस्त्रधारी, दुश्मन इनका विश्वास न कीजिये और त्रियाचरित्र से डरिये। कवीश्वर क्या वर्णन नहीं कर सकता और योगी क्या नहीं जानता, मतवाला क्या नहीं बकता, स्त्री क्या नहीं कर सकती। सच है घोड़े का ऐब, बादल का गर्जना, त्रियाचरित्र, पुरुष का भाग्य; देवता भी नहीं जानते, आदमी का तो क्या मकदूर है। इतने में उसके बाप ने कोतवाल को यह खबर दी। वहाँ से प्यादे आये और इसे बाँध कोतवाल के पास लाये। कोतवाल ने राजा को खबर दी। राजा ने उससे यह हाल पूछा तो उसने कहा मैं कुछ नहीं जानता और जो सेठ की लड़की से बुलाकर पूछा तो उसने कहा महाराज! प्रत्यक्ष देखकर मुझसे पूछते क्या हो? तब राजा ने उससे कहा कि तुझे क्या दण्ड दें? यह सुनकर वह बोला कि जो आपके न्याय में ठहरे। राजा ने कहा, इसे ले जाकर शूली दो। वधिक राजा की आज्ञा पाकर उसे शूली देने ले चले।

यह सब तमाशा वह चोर भी खड़ा खड़ा देखता था। जब उसे विश्वास हुआ कि यह नाहक मारा जाता है तो उसने दुहाई दी। तब राजा ने उसे बुलाकर पूछा कि तू कौन है? उसने कहा महाराज! मैं चोर हूँ और यह बेगुनाह है। नाहक इसका खून होता है। आपने कुछ न्याय नहीं किया। तब राजा ने उसे भी बुलाया और चोर से पूछा कि तू अपने धर्म से सच कह कि यह मुकद्दमा किस तरह से है। तब चोर ने ब्योरेवार हाल कहा। राजा ने अच्छी तरह से समझकर हरकारा भेज उस स्त्री के मरे हुए यार के मुँह में से नाक मँगवाकर देखी। तब जाना कि यह बेतकसीर है और चोर सच्चा है। फिर चोर बोला कि महाराज! नेकों का पालन करना और दुष्टों को दण्ड देना राजों का सनातन धर्म है। इतनी बात कहकर चूड़ामणि तोता बोला कि महाराज! ऐसे गुणों की पूरी स्त्रियाँ होती हैं। राजा ने उस स्त्री का मुँह काला कर, शिर मुड़वा, गधे पर चढ़वा, नगरी की फेरी दिलवा बाहर छुड़वा दिया और उस चोर को और साहूकार के बच्चे को बीड़े दे बिदा किया। इतनी कथा कह बेताल बोला कि हे राजा! इन दोनों में किसे ज्यादह पाप हुआ? तब राजा विक्रम बोला कि स्त्री को। फिर बेताल बोला कि किस तरह से? यह सुनकर राजा ने कहा मर्द कैसा ही दुष्ट हो पर उसे धर्म अधर्म का विचार रहता है और स्त्री को कुछ धर्म अधर्म का ज्ञान नहीं रहता इससे स्त्री को बहुत पाप हुआ।

यह बात सुनके बेताल फिर चला गया और उसी वृक्ष पर जा लटका और राजा फिर वहाँ जा उसको पेड़ से उतार गठरी बाँध काँधे पर रख ले चला ॥ ४ ॥

पाँचवीं कहानी।

बेताल बोला कि हे राजा ! उज्जैन नामक नगरी में महाबल नाम का राजा था और उसका हरिदास नाम एक दूत था। उस दूत की बेटी का नाम महादेवी था। वह अति सुन्दरी थी। जब वह वर योग्य हुई तो उसके पिता को चिन्ता हुई कि इसका वर ढूँढ़ ब्याह कर देना चाहिये। निदान एक दिन उस लड़की ने अपने बाप से कहा कि पिता, जो सब गुण जानता हो मुझे उसे दीजे। तब उसने कहा कि जो सब विद्या जानता होगा तेरा ब्याह मैं उसी के साथ करूँगा। एक दिन उस राजा ने हरिदास को बुलाकर कहा कि दक्षिण दिशा में हरिचन्द नाम राजा है। उसके पास तुम जाकर मेरी तरफ से क्षेम कुशल पूछो और उनकी क्षेम कुशल के समाचार लाओ। हरिदास राजा की आज्ञा पा उस राजा के पास कितने ही दिनों में जा पहुँचा और उससे अपने राजा का सब सँदेशा कहा और वहीं रहने लगा।

एक दिन की बात है कि उस राजा ने इससे पूछा कि हरिदास ! अभी कलियुग का आरम्भ हुआ कि नहीं ? उसने हाथ जोड़कर कहा, महाराज ! कलिकाल वर्तमान है। क्योंकि संसार में झूठ बढ़ा है और सत्य घट गया है। लोग मुँह पर मीठी बातें करते हैं और पेट में कपट रखते हैं। धर्म जाता रहा। पाप बढ़ा। पृथ्वी फल कम देने लगी। राजा डाँड़ लेने लगे। ब्राह्मण लालची हुए। स्त्रियों ने लाज छोड़ दी। बेटा बाप की आज्ञा नहीं मानता। भाई भाई का विश्वास नहीं करता। मित्रों से मित्रता जाती रही। पति पत्नी में स्नेह घट गया। सेवकों ने सेवा छोड़ दी। जितनी खराब बातें थीं, वे सब दृष्टि आती हैं। जब राजा से यह सब कह चुका तब राजा उठकर महल में गया और यह अपने स्थान पर आ बैठा। इतने में एक ब्राह्मण हरिदास के पास आ कहने लगा कि मैं तुमसे कुछ माँगने आया हूँ। उसने कहा माँग। तब ब्राह्मण ने कहा कि अपनी बेटी मुझको दे। हरिदास बोला कि जिसमें सब गुण होंगे मैं उसको दूँगा। यह सुनके वह बोला कि मैं सब विद्या जानता हूँ। उसने कहा कुछ अपनी विद्या मुझे दिखला दो तो मैं जानूँ कि तुझे विद्या आती है। तब ब्राह्मण ने कहा कि मैंने एक रथ बनवाया है। उसमें यह सामर्थ्य है कि जहाँ जाने की इच्छा करो वहाँ वह एक क्षण में पहुँचा दे। तब हरिदास ने कहा कि उस रथ को प्रभात समय मेरे पास ले आइयो। वह भोर को रथ ले हरिदास के

पास आया और ये दोनों रथ पर सवार हो उज्जैन नगरी में आन पहुँचे। परन्तु यहाँ उसके आने के पहिले किसी और ब्राह्मण के लड़के ने उसके बड़े बेटे से आकर कहा था कि तू अपनी बहिन मुझे दे और उसने भी यही कहा था कि जो सब विद्या जानता होगा उसको दूँगा और उस ब्राह्मण के पुत्र ने भी कहा था कि मैं सब विद्या जानता हूँ। यह सुनकर उसने कहा था कि तुझे ही दूँगा और एक और ब्राह्मण के पुत्र ने उस लड़की की मा से कहा था कि तू अपनी बेटी हमको दो। उसने भी उसे यही जवाब दिया था कि जो सब विद्या जानता होगा उसी को अपनी लड़की दूँगी। उस ब्राह्मण के लड़के ने भी कहा था कि मैं सम्पूर्ण विद्या जानता हूँ और शब्दवेधी तीर भी मारता हूँ। यह सुनकर उसने भी कहा था कि मैंने अंगीकार किया, तुझे ही दूँगी। निदान इसी तरह से तीनों वर आनकर इकट्ठे हुए।

हरिदास आके अपने मन में चिन्ता करने लगा कि एक कन्या और तीन वर किसे दूँ, किसे न दूँ। इसी सोच में था कि रात को एक राक्षस आकर उस कन्या को उठा विन्ध्याचल पर्वत के ऊपर ले गया। कहा है कि अति किसी वस्तु की अच्छी नहीं। अति रूपवती सीता थीं, उनको रावण ने हरा। राजा बलि ने अति दान दिया सो दरिद्री हुए। रावण ने अति गर्व करके अपने कुल की क्षय कराई। निदान जब भोर हुआ और सब घर के लोगों ने कन्या को न देखा, तब अनेक प्रकार की चिन्ता करने लगे और यह बात वे तीनों वर भी सुनकर वहाँ आये। उनमें एक ज्ञानी था। उससे हरिदास ने पूछा कि अय ज्ञानी! तू बता कि वह कन्या कहाँ गई? उसने एक घड़ी विचार करके कहा कि तुम्हारी लड़की को राक्षस ने पर्वत में ले जाके रक्खा है। इसमें दूसरा बोला कि राक्षस को मारकर मैं अभी ले आऊँगा, तब तीसरा बोला कि हमारे रथ पर सवार हो जाओ और उसे ले आओ। यह सुनते ही वह झट से उसके रथ पर सवार हो वहाँ पहुँचा और उस देव को मार तुरन्त उसे ले आया। स्त्री देख तीनों आपस में झगड़ने लगे। यह देख उसके बाप ने मन में सोच करके कहा कि सबों ने बड़ा साहस किया है, किसे दूँ? इतनी कथा कह बेताल बोला कि अय राजा विक्रम! उन तीनों में से वह कन्या किसकी स्त्री हुई? राजा बोला कि वह स्त्री उसकी हुई जो राक्षस को मारकर लाया। बेताल ने कहा, सबका गुण बराबर है, किस तरह से वह स्त्री उसकी हुई? राजा ने कहा, उन दोनों ने इहसान किया इससे उनको सवाब हुआ और वह लड़कर तथा उसे मारकर लाया है, इस वास्ते वह उसकी स्त्री हुई। यह बात सुन बेताल फिर उसी

वृक्ष में जा लटका और राजा भी वहीं जा वेताल को बाँध, काँधे पर रख ले चला ॥ ५ ॥

छठी कहानी।

फिर वेताल बोला कि अय राजा! धर्मपुर नाम एक नगर है। वहाँ का राजा धर्मशील था और उसके मन्त्री का नाम अन्धक था। उसने एक दिन राजा से कहा कि महाराज एक मन्दिर बनवा उसमें देवी को बिठा नित पूजा किया कीजिये। इसका शास्त्र से बड़ा पुण्य मिलता है। तब राजा एक मन्दिर बनवा और उसमें देवी पधरा शास्त्र की विधि से पजा करने लगा। वह विना पूजा किये जल न पीता था। इस तरह से जब कितनी एक मुद्दत बीती तब एक दिन दीवान ने कहा, महाराज! दृष्टान्त प्रसिद्ध है कि निपूते का घर सूना, मूर्ख का हृदय सूना और दरिद्री का सब कुछ सूना है। यह बात सुन राजा देवी के मन्दिर में जा हाथ जोड़ स्तुति करने लगा कि हे देवी! तुझे ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और इन्द्र आठ पहर सेवते हैं और तूने महिषासुर, चण्ड, मुण्ड, रक्तबीज आदि दैत्यों को मार पृथ्वी का भार उतारा और जहाँ जहाँ तेरे भक्त को विपत्ति पड़ी, तहाँ तहाँ तू सहाय हुई और इसी आशा से मैं तेरे द्वार पर आया हूँ। अब मेरे भी मन की इच्छा पूरी कर। इतनी स्तुति जब राजा कर चुका तब देवी के मन्दिर से आवाज आई कि राजा! मैं तुझ पर प्रसन्न हुई, वर माँग, जो तेरे मन में है। राजा बोला, हे माता! जो तू मुझ पर प्रसन्न हुई तो मुझको पुत्र दे। देवी ने कहा, राजा! तेरे महाबली और बड़ा प्रतापी पुत्र होगा। तब तो राजा ने चन्दन, अक्षत, फूल, धूप, दीप, नैवेद्य से पूजा की और इसी तरह से वह नित्य पूजा करता रहा। निदान कितने दिनों के पीछे राजा के एक लड़का पैदा हुआ। राजा ने बाजे गाजे से कुटुम्ब समेत जाकर देवी की पूजा की।

इस अर्से में संयोगवश एक दिन किसी नगर से एक धोबी अपने मित्र को साथ लिये इस शहर की तरफ आता था कि देवी का मन्दिर उसे दृष्टि आया। उसने दण्डवत् करने का इरादा किया। इतने में एक धोबी की लड़की, जो अति सुन्दरी थी, सामने आती हुई उसने देखी। उसे देख मोहित हुआ और देवी के दर्शन को गया। दण्डवत् कर हाथ जोड़ उसने अपने मन में कहा देवीजी इस सुन्दरी से मेरा ब्याह तेरी कृपा से हो तो मैं अपना सिर तुझे चढ़ाऊँ। यह मान्ता मान दण्डवत् कर मित्र को साथ ले अपने नगर को गया। जब वहाँ पहुँचा तो उसको विरह ने ऐसा सताया कि उसकी

नींद, भूख, प्यास सब बिसर गई। आठ पहर उसी के ध्यान में रहने लगा। उसकी ऐसी बुरी हालत उसके मित्र ने देख, उसके बाप से सब ब्योरेवार कहा। उसका पिता भी यह सुनकर भौचक हो रहा और अपने जी में चिन्ता करने लगा कि इसकी दशा देख ऐसा मालूम होता है कि जो उस कन्या से इसकी सगाई न होगी तो यह अपना प्राण त्याग देगा। इससे उचित यह है कि उस लड़की से इसका ब्याह कर दीजिये कि जिससे यह बचे। इतना विचार पुत्र के मित्र को साथ ले उस गाँव में पहुँच उस लड़की के पिता से जाकर कहा मैं तेरे पास कुछ याचने आया हूँ। जो तू देवे तो मैं कहूँ। उसने कहा मेरे पास वह पदार्थ होगा तो मैं दूँगा, तुम कहो। इस तरह से वचनबद्ध कर कहा—तू अपनी लड़की मेरे पुत्र को दे। यह सुनके उसने भी उसकी बात मानकर ब्राह्मण को बुलवा, दिन, लग्न, मुहूर्त ठहराकर कहा तुम लड़के को ले आवो। मैं अपनी लड़की के हाथ पीले कर दूँगा। यह सुन वह वहाँ से उठ अपने घर आ सब सामान ब्याह का तैयार कर ब्याहने को गया और वहाँ जा ब्याह कर बेटे बहू को ले फिर अपने घर आया और दुलहा दुलहिन आपस में आनन्द से रहने लगे।

कितने दिनों के बाद उस लड़की के पिता के यहाँ कुछ शुभ कर्म था। वहाँ से न्योता इनको आया। ये स्त्री पुरुष तैयार हो अपने मित्र को साथ ले उस नगर को चले। जब नगर के निकट पहुँचे तो देवी का मन्दिर नजर आया। तब उसे वह बात याद आई। उसने अपने जी में विचारकर कहा कि मैं बड़ा असत्यवादी अधर्मी हूँ कि देवी से मिथ्या बोला। इतनी बात अपने मन में कह उस मित्र से कहा तुम यहाँ खड़े हो, मैं देवी का दर्शन कर आऊँ और स्त्री को भी कहा तू यहाँ ठहर। यह कह मन्दिर के पास पहुँच कुण्ड में स्नान कर देवी के सम्मुख जा हाथ जोड़ नमस्कार कर खड्ग उठा गर्दन पर मारा कि सिर तन से जुदा हो भूमि में गिरा। निदान कितनी देर पीछे उसके मित्र ने विचारा कि उसे गये बड़ी देर हुई अब तक फिरा नहीं। चलकर देखा चाहिये। और उसकी स्त्री से कहा तू यहाँ खड़ी रह, मैं उसे शीघ्र ही ढूँढकर ले आता हूँ। यह कहकर देवी के मन्दिर में गया तो देखता क्या है कि धड़ से उसका सिर जुदा पड़ा है। यह हालत वहाँ की देख अपने मन में कहने लगा कि संसार बहुत कठिन जगह है। कोई यह न समझे कि इसने अपने हाथ से सीस देवी को चढ़ाया है, बल्कि यह कहेगा कि इसकी स्त्री जो अति सुन्दरी थी उसके लेने के लिये मारकर यह मकर करता है। इससे यहाँ मरना उचित है।

संसार में बदनामी लेना अच्छा नहीं। यह कह तालाब में नहा के सामने आ हाथ जोड़ प्रणाम कर खाँड़ा उठा गले में मारा कि रुण्ड से मुण्ड जुदा हो गया। यह स्त्री यहाँ अकेली खड़ी-खड़ी उकताकर राह देख-देख निरास हो ढूँढ़ती हुई देवी के मन्दिर में गई। वहाँ जा देखती क्या है कि दोनों मरे पड़े हैं। इन दोनों को मुआ देख उसने जी में बिचारा कि लोग यह तो न जानेंगे कि आप से आप देवी को ये बलि चढ़े हैं। सब कहेंगे कि राँड़ व्यभिचारिणी थी। बदकारी करने के लिये दोनों को मार आई है। इस बदनामी से मरना उचित है। यह सोचकर सरोवर में गोता मार देवी के सम्मुख आ सिर नवा दण्डवत् कर तलवार उठा चाहती थी कि गर्दन में मारे कि देवी ने सिंहासन से उतर उसका हाथ पकड़ लिया और कहा कि मैं तुझसे प्रसन्न हूँ। हे पुत्र! वर माँग। तब उसने कहा कि माता तू जो मुझसे प्रसन्न है, तो इन दोनों को जीदान दे। देवी ने कहा इनके धड़ों से सिर लगा दे। इसने मारे हर्ष के घबड़ाकर धड़ से सिर बदल के लगा दिया और देवी ने अमृत ला छिड़क दिया। ये दोनों जीकर उठ खड़े हुए और आपस में झगड़ने लगे। यह कहे स्त्री मेरी और वह कहे स्त्री मेरी। इतनी कथा कह वेताल बोला कि अय राजा विक्रम! इन दोनों में वह स्त्री किसकी हुई? राजा ने कहा सुन! शास्त्र में इसका प्रमाण लिखा है कि नदियों में गंगा उत्तम हैं और पर्वतों में सुमेरु पर्वत श्रेष्ठ है और वृक्षों में कल्पवृक्ष और अंगों में मस्तक उत्तम है। इस न्याय से जिसका उत्तम अंग है उसी की स्त्री हुई। इतनी बात सुन वेताल फिर उसी वृक्ष में जा लटका और राजा भी जा उसे बाँध कन्धे पर रख ले चला॥ ६॥

सातवीं कहानी।

फिर वेताल बोला कि अय राजा! चम्पापुर नाम एक नगर है। वहाँ के राजा का नाम चम्पकेश्वर और रानी का नाम सुलोचना और बेटी का नाम त्रिभुवनसुन्दरी है। वह अति सुन्दरी है। उसका मुख चन्द्रमा सा, बाल घटा से, आँख मृग की सी, भौंहें धनुष सी, नाक कीर की सी, गला कपोत का सा, दाँत अनार के से दाने, होठों की लाली कुन्दुरू की सी, कमर चीते की सी, हाथ-पाँव कोमल कमल से और रंग चम्पे का सा है। निदान उसके जोबन की ज्योति प्रतिदिन बढ़ती थी। जब वह युवती हुई तब राजा रानी अपने चित्त में चिन्ता करने लगे और देश-देश के राजाओं को खबर गई कि राजा चम्पकेश्वर के घर में ऐसी कन्या है, जिसके रूप को देखते ही सुर, नर, मुनि मोहित हो रहते हैं। तब देश-देश के राजाओं ने अपने-अपने चित्र ब्राह्मणों के हाथ

राजा चम्पकेश्वर के यहाँ भेज दिये। राजा ने अपनी बेटी को सब राजाओं की तसवीरें दिखलाईं, पर उसके मन में कोई न भाई। तब राजा ने कहा कि तू स्वयंवर कर, परन्तु उसने यह बात भी न मानी और अपने बाप से कहा कि रूप, बल, ज्ञान जिसमें ये तीनों गुण हों, हे पिता! उसे मुझे देना। निदान जब कितने ही एक दिन बीते तब चारों दिशाओं से चार वर आये। उनसे राजा ने कहा कि अपना-अपना गुण विद्या मेरे आगे प्रकट कर कहो। उनमें से एक बोला कि मुझमें यह विद्या है कि एक कपड़ा बनाकर पाँच लाल को बेचता हूँ। जब उसका मोल मेरे हाथ आ जाता है तब उसमें से एक लाल ब्राह्मण को देता हूँ, दूसरा देवता को चढ़ाता हूँ, तीसरा अपने अंग लगाता हूँ, चौथा स्त्री के वास्ते रखता हूँ। पाँचवें को बेचकर रुपये ले नित्य भोजन करता हूँ। यह विद्या दूसरा कोई नहीं जानता और मेरा जो रूप है सो प्रकट है। दूसरा बोला, मैं जलथल के पक्षियों की भाषा जानता हूँ। मेरे बल का दूसरा नहीं और सुन्दरताई मेरी आपके आगे है। तीसरे ने कहा, मैं ऐसा शास्त्र समझता हूँ कि मेरे सामने दूसरा नहीं और सुन्दरता मेरी तुम्हारे रूबरू है। चौथे ने कहा कि मैं शस्त्रविद्या में एक ही हूँ। दूसरा मुझसा नहीं। शब्दवेधी तीर मारता हूँ और मेरा रूप जगत् में प्रकट है। आप भी देखते ही हैं। चारों की बातें सुन राजा अपने जी में चिन्ता करने लगा कि चारों गुण में बराबर हैं, किसे कन्या दूँ? यह सोचकर उसने बेटी के पास जा चारों का गुण वर्णन किया और कहा मैं तुझे किसे दूँ। यह सुन वह लाज की मारी नीची गर्दन कर चुप हो रही और कुछ जवाब न दिया। इतनी बात कह वेताल बोला कि हे राजा विक्रम! वह स्त्री किसके योग्य है? राजा ने कहा जो कपड़ा बना कर बेचता है वह जाति का शूद्र है और जो भाषा जानता है वह जाति का वैश्य है, जो शास्त्र पढ़ा है सो ब्राह्मण है और जो शब्दवेधी बाण मारता है वह उसका सजाती है। यह स्त्री उसके लायक है। इतनी बात सुन वेताल फिर उसी पेड़ में जा लटका और राजा भी वहाँ उसे बाँध कन्धे पर रखकर ले चला॥७॥

आठवीं कहानी।

तब वेताल ने कहा कि हे राजा विक्रम! मिथिलावती नाम एक नगरी है। वहाँ का राजा गुणाधिप है। उसकी सेवा करने को दूर देश से एक चिरमदेव नामक राजपुत्र आया। वह नित्य उस राजा के दर्शन को जाया करता था। परन्तु मुलाकात न होती थी। जितना धन वह लाया वह वर्ष भर में सब बैठकर यहाँ खा गया और वहाँ उसका सब घर तबाह हो गया। एक दिन की बात

है कि राजा को शिकार को सवार हुआ देख चिरमदेव भी उसकी सवारी के साथ हो लिया। संयोगवश राजा एक वन में जाकर फौज से जुदा हो गया और साथ के सब लोग व सवारी एक ओर जंगल में भटक गये। केवल चिरमदेव ही राजा के पीछे था। उसने पुकारकर कहा कि महाराज! सवारी और साथ के लोग पीछे रह गये हैं और मैं आपके घोड़े के साथ घोड़ा मारे चला आता हूँ। राजा ने यह सुनकर घोड़ा रोका। इतने में यह बराबर आया। राजा ने उसे देख के पूछा कि तू किस वास्ते इतना दुर्बल हो रहा है? यह बोला कि जिस स्वामी के पास रहिये और वह ऐसा हो कि हजारों को पालता हो और अपनी खबर न ले तो इसमें उसका कुछ दोष नहीं, वरन् अपने कर्म का दोष है। जैसे दिन को सारा जहान देखता है परन्तु उल्लू नहीं देखता, इसमें सूर्य का क्या दोष है? मुझको पश्चात्ताप है कि जिसने माँ के पेट में रोजी पहुँचाई थी और जब हम पैदा हुए और दुनिया की वस्तुओं का सुख करने के लायक हुए तब वह खबर नहीं लेता। नहीं मालूम कि सोता है या मर गया और अपने लिये माल और दौलत बड़े आदमी से चाहते वक्त यदि वह मुँह बनावे और नाक भौं चढ़ावे तो इससे जहर खाकर मर जाना अच्छा है। ये छः बातें आदमी को हलका करती हैं। एक तो खोटे नर की प्रीति, दूसरे बिना कारण की हँसी, तीसरे स्त्री से विवाद करना, चौथे असज्जन स्वामी की सेवा, पाँचवें गधे की सवारी, छठे बिना संस्कृत की भाषा। ये पाँच चीजें विधाता मनुष्य के भाग्य में पैदा होते ही लिख देता है। एक तो आयुर्बल, दूसरे कर्म, तीसरे धन, चौथे विद्या, पाँचवें यश। हे महाराज! जब तक आदमी का पुण्य उदय रहता है, तब तक सब उसके दास बने रहते हैं और जब पुण्य घट जाता है, तो बन्धु वैरी हो जाते हैं। परन्तु एक बात मुकदम है। स्वामी की सेवा करने से कभी न कभी फल मिल ही रहता है। निष्फल नहीं रहता। यह सुन राजा ने उन सब बातों को सोचकर उस समय तो कुछ उत्तर न दिया; परन्तु उससे यह कहा कि मुझे भूख लगी है। कहीं से कुछ खाने को ला। चिरमदेव ने कहा, यहाँ अन्न भोजन को न मिलेगा। यह कह जंगल में जा एक हिरन मार खीसे से चकमक निकाल आग सुलगा मांस के तिक्के भून राजा को खूब खिला, आप भी खाये। जब राजा का पेट भर चुका तब उसने कहा कि हे राजपुत्र! अब हमको नगर को ले चलो, क्योंकि राह मुझे मालूम नहीं। उसने राजा को नगर में ला उसके मन्दिर में पहुँचा दिया। राजा ने उसकी चाकरी नियत कर दी और बहुत से वस्त्र-आभूषण दिये और वह राजा की सेवा में हाजिर रहने लगा।

एक दिन राजा ने किसी काम के लिए समुद्र किनारे उस राजपुत्र को भेजा। वह जब किनारे पहुँचा, तब उसने एक देवी का मन्दिर देखा। उसमें जा देवी की पूजा की। लेकिन जब यह वहाँ से बाहर निकला, तो वहीं उसके पीछे से एक सुन्दरी नायिका आ उससे पूछने लगी कि हे युवक ! तू किसलिये यहाँ आया है ? वह बोला कि ऐश के लिये आया हूँ और तेरे रूप को देख मैं मोहित हो रहा हूँ। उसने कहा जो मुझसे कुछ इरादा रखता है तो पहिले तू इस कुण्ड में जाकर स्नान कर पीछे जो मुझसे कहेगा सो मैं सुनूँगी। यह सुनते ही कपड़े उतार तालाब में पैठ गोता मार ज्योंही उसने सिर निकाला त्योंही देखता क्या है कि अपने नगर में खड़ा है। इस अचम्भे को देख अपने घर जा और कपड़े पहन राजा के पास आ सब वृत्तान्त कहा। राजा ने सुनते ही कहा कि मुझे भी यह अचम्भा दिखा। यह कहते ही सवारी लगा दोनों सवार होकर चले। कितने ही दिनों में सागर के किनारे आये और उसी देवी के मन्दिर में जाकर पूजा की। जब राजा बाहर निकला तब वही नायिका एक सखी को साथ लिये, राजा के पास आ खड़ी हुई और राजा का रूप देख मोहित हो बोली कि राजा ! जो मुझे आज्ञा दे सो करूँ। राजा ने उसे उत्तर दिया जो तू मेरा कहना करे, तो मेरे सेवक की स्त्री हो। वह बोली मैं तेरे रूप के अधीन हुई हूँ। इसकी जोरू किस तरह से होऊँ ? राजा ने कहा अभी तो तूने मुझसे कहा जो तू हुक्म करेगा सो करूँगी और सज्जन जिस बात को कहते हैं, उसका निर्वाह करते हैं। इससे अपने वचन को पाल। मेरे सेवक की जोरू हो। यह सुन के वह बोली कि जो आपने कहा सो मुझे अंगीकार है। तब राजा सेवक का गान्धर्व विवाह कर दोनों को साथ ले अपने राजधाम में आया। इतनी बात कह वेताल बोला कि हे राजा ! बतलाओ स्वामी और सेवक में किसका सत अधिक हुआ ? राजा बोला सेवक का। फिर वेताल बोला कि जिस राजा ने ऐसी सुन्दर स्त्री पा सेवक को दी उस राजा का सत अधिक क्यों न हुआ ? तब राजा विक्रम ने कहा कि जिनको धर्म उपकार करना है, उनको उपकार करने में अधिक क्या है और जो आप सेवक हो परकाज करे, सोई अधिक है। इस कारण सेवक का सत अधिक हुआ। यह बात सुन वेताल उसी वृक्ष पर जा लटका और राजा फिर उसे वहाँ से उतार कन्धे पर रख ले चला॥ ८॥

नवीं कहानी ।

वेताल बोला कि अय राजा विक्रम ! मदनपुर नाम एक नगर है। वहाँ

वीरवर नाम का राजा था और उसी देश में हिरण्यदत्त नाम एक बनिया था। उसकी बेटी का नाम मदनसेना था। वह एक दिन वसन्तऋतु में सखियों को साथ लिये अपने बाग में सैर और तमाशे के वास्ते गई। संयोगवश उसके आने के पहले ही धर्मदत्त सेठ का बेटा सोमदत्त अपने मित्र को लिये वन-विहार को आया था और वहाँ से फिरता हुआ उस बाड़ी में आ पहुँचा और इसे देख मोहित हो गया। अपने मित्र से कहने लगा कि भाई! यह मुझसे मिले तो मेरा जीवन सफल हो और जो न मिले तो इस दुनिया में जीना व्यर्थ है। यह अपने मित्र से बातें कर विरह में व्याकुल हो मदनसेना के पास जा उसका हाथ पकड़ के कहने लगा कि जो तू मुझसे प्रीति न करेगी, तो मैं तेरे ऊपर अपना प्राण दूँगा। वह बोली कि ऐसा मत कीजो, इसमें पाप होगा। तब उसने कहा तेरी प्रीति ने मेरे दिल को बीधा है और तेरे विरह की आग ने मेरे शरीर को जला दिया। इस पीर से मेरी सुधिबुधि सब जाती रही है और मुझे इस समय प्रीति के गलबे से धर्म-अधर्म का लिहाज नहीं है, पर जो तू मुझे वचन दे तो मेरे जी में जी आवे। मदनसेना बोली कि आज के पाँचवें दिन मेरा ब्याह होगा, तो पहिले मैं तुझसे मिल जाऊँगी, पीछे अपने पति के यहाँ रहूँगी।

यह वचन दे सौगन्द खा, वह अपने घर को गई और यह अपने घर आया। निदान पाँचवें दिन उसका ब्याह हुआ। उसका पति ब्याह करके अपने घर ले आया। कितने एक दिनों के पीछे रात के समय उसकी देवरानी-जिठानी ने ज़बरदस्ती उसे उसके पति के पास भेजा। वह रंगमहल में जा चुपचाप एक कोने में बैठ रही। इस अर्से में उसके पति ने जो देखा तो उसका हाथ पकड़-सेज पर बिठा लिया और जब चाहा कि गले लगाऊँ तो उसने हाथ से झिटक दिया और जो जो उस साहूकार बच्चे से कौल-करार हुआ था, सो सब बयान किया। यह सुनके उसके पति ने कहा जो तू सचमुच उसके पास जाया चाहती है तो जा। वह अपने स्वामी की आज्ञा पा उस सेठ के स्थान को चली। राह में चोर ने उसे देख प्रसन्न हो इसके पास आकर कहा कि तू दो पहर रात के समय इस अँधेरे में ऐसे वस्त्र-आभूषण पहिन अकेली कहाँ जाती है? वह बोली जिस जगह मेरा प्रीतम प्यारा बसता है। यह सुन चोर ने कहा, यहाँ तेरा सहायक कौन है? वह कहने लगी कि धनुषबाण लिये मदन मेरी सहायता करनेवाला साथ है। यह कह फिर चोर के आगे आद्योपान्त अपनी कथा वर्णन करके कहा कि मेरा शृंगार भंग मत कर; मैं तुझे वचन दिये जाती

हूँ कि वहाँ से जब फिरूँगी तब गहना तेरे हवाले करूँगी। यह सुनके चोर ने अपने दिल में कहा कि गहना देने का तो मुझे वचन ही दिये जाती है, फिर क्यों इसका शृंगार भंग करूँ। यह समझकर उसे छोड़ दिया और आप वहाँ बैठ रहा।-

यह वहाँ गई जहाँ सोमदत्त पड़ा सोता था। जाते ही जो इसने उसे अचानक जगाया तो वह घबराकर उठा और कहने लगा कि तू देवकन्या, ऋषिकन्या, नागकन्या इनमें से सच कह कौन है और मेरे पास कहाँ से आई है ? वह बोली कि मैं नरकन्या हूँ और हिरण्यदत्त सेठ की बेटी हूँ। मदनसेना मेरा नाम है। तुझे स्मरण नहीं कि जो उस उपवन में तू जबरदस्ती मेरा हाथ पकड़ के भोग करने पर उद्यत हुआ था और मैंने तेरे कहने के अनुसार यह सौगन्द की थी कि विवाहित पुरुष को त्याग करके तेरे पास आऊँगी। सो मैं आई हूँ। अब जो तेरी इच्छा में आवे सो कर। सोमदत्त ने कहा यह तूने वृत्तान्त अपने पति के आगे कहा या नहीं ? इसने उत्तर दिया कि मैंने सम्पूर्ण हाल कहा और उसने सब दरियाफ्त करके मुझे तेरे पास बिदा किया। सोमदत्त बोला कि यह बात वैसी है जैसे बिना वस्त्र का गहना, बिना घी के भोजन, बिना स्वर के गान। ये सब एक से हैं। इसी तरह मैले वसन तेज को, कुभोजन बल को, कुभार्या प्राण को और कुपुत्र कुल को हरते हैं। राक्षस खफा होता है तो प्राण लेता है, परस्त्री हित और अनहित दोनों में दुःख देनेवाली है, स्त्री जो न करे सो थोड़ा। क्योंकि जो बात उसके मन में रहती है सो जबान पर नहीं लाती और जो जबान में है उसे प्रकट नहीं करती और जो करती है सो कहती नहीं। स्त्री को संसार में भगवान ने अजब पैदा किया है। इतनी बातें कह सोमदत्त ने इसे जवाब दिया कि मैं पराई स्त्री से वास्ता नहीं रखता। यह सुन वह फिर उलटी अपने घर को चली। राह में उस चोर से भेंट हुई। उसके आगे सब वृत्तान्त कहा। चोर ने सुनके शाबाशी दे छोड़ दिया। यह अपने पति के निकट आई और उससे वृत्तान्त वर्णन किया। पर उसके पति ने उसे प्यार न किया और कहा कोयल का स्वर ही रूप है और नारी का रूप पातिव्रत है और कुरूप मनुष्य का रूप विद्या और तपस्वी का रूप क्षमा है। इतनी कथा कह वेताल बोला कि अय राजा! इन तीनों में किसका त्याग बड़ा है ? राजा ने कहा चोर का। वेताल ने कहा किस तरह ? राजा ने कहा और पुरुष पर उसकी इच्छा देख स्वामी ने छोड़ा। राजा का डर मान सोमदत्त ने छोड़ा और चोर के छोड़ने का कुछ कारण न था। इससे चोर

ही प्रधान है । यह सुन वेताल फिर वृक्ष में जा लटका और राजा भी वहीं जा उसे वृक्ष से उतार और बाँध तथा काँधे पर रख फिर ले चला ॥ ९ ॥

दशवीं कहानी ।

वेताल बोला कि अय राजा ! गौड़देश में बरद्वान नाम का एक नगर है और गुणशेखर नाम का वहाँ का एक राजा था । उसका मन्त्री एक सरावगी अभयचन्द्र नाम का था । उसी के समझाने से राजा भी जैनधर्म में आया और उसने शिवपूजा, विष्णुपूजा, गोदान, भूमिदान, पिण्डदान, जुआ, मदिरा आदि सबका मनाई की कि नगर में कोई करने न पावे और हाड़ कोई गंगा में न ले जाने पावे । इन बातों की दीवान ने राजा से आज्ञा ले नगर में डौंड़ी फिरवा दी कि जो कोई ये कर्म करेगा उसका सर्वस्व राजा छीनकर दण्ड दे शहर से निकाल देगा । एक दिन दीवान राजा से कहने लगा कि महाराज ! धर्म का विचार सुनिये । जो कोई किसी का जी लेता है वह और जन्म में उसका भी जी लेता है । इसी पाप से संसार में अनेक मनुष्यों का जीवन-मरण नहीं छूटता । वे फिर फिर जन्म लेते हैं और मरते हैं । इससे जगत् में जन्म पा के धर्म बटोरना मनुष्य को उचित है । देखिये काम, क्रोध, लोभ, मोहवश हो ब्रह्मा, विष्णु, महादेव किसी न किसी तौर से संसार में अवतार ले ले आते हैं । बल्कि उनसे गाय अच्छी हैं जो राग, द्वेष, मद, लोभ, मोह से रहित हैं और प्रजा की रक्षा करती हैं और उनके जो पुत्र होते हैं वे भी जगत् के जीवों को बहुत तरह से सुख दे पालते हैं । इससे देवता और मुनि सब गौ को मानते हैं । इसलिए देवताओं को मानना अच्छा नहीं । इस जग में गाय को मानिये और हाथी से लगा चिउँटी और पशु पक्षी नर तक हर एक जीव की रक्षा करना धर्म है । जहान में इसके समान कोई धर्म नहीं । जो नर बिराने मांस को खा अपना मांस बढ़ाते हैं, सो अन्तकाल में नरकभोग करते हैं । इससे मनुष्य को उचित है कि जीव की रक्षा करे । जो लोग कि बिराना दुःख नहीं समझते और औरों के जीव मार मार खाते हैं, उनकी इस पृथ्वी में उमर कम होती है और लूले, लँगड़े, काने, अन्धे, बौने, कुबड़े ऐसे अंगहीन हो हो जन्म लेते हैं और जैसे पशु, पक्षी के अंग खाते हैं वैसे ही अपने अंग खवाते हैं। मद्यपान करने से महापाप होता है इससे मद्यमांस का खाना उचित नहीं । इस तरह से दीवान ने राजा को अपने मत का ज्ञान समझाया और उसे जैनधर्म में ऐसा लाया कि जो वह कहता था, वही राजा करता था । राजा ब्राह्मण,

योगी, जंगम, सेवड़ा, संन्यासी, फकीर किसीको न मानता था और इसी धर्म से राज्य करता था। एक दिन काल के वश हो राजा मर गया। तब उसका बेटा धर्मध्वज गद्दी पर बैठा और राज्य करने लगा। एक दिन उसने अभयचन्द्र दीवान को पकड़वा सिर पर सात चोटियाँ रखवा, मुँह काला करवा, गधे पर चढ़ा, डौंड़ी बजवा और नगर के फेरे दिलवा, देश से निकाल दिया।

एक दिन राजा वसन्तऋतु में रानियों को साथ ले एक बाग की सैर को गया। उस बाग में एक बड़ा तालाब था और उसमें कमल फूल रहे थे। राजा उस सरोवर की शोभा देख कपड़े उतार स्नान करने को उतरा और एक फूल तोड़ तट पर आ रानी के हाथ में देने लगा कि फूल हाथ से छूटकर रानी के पाँव पर गिरा और उसकी चोट से रानी का पाँव टूट गया। तब राजा घबड़ाकर एकबारगी बाहर निकल उसकी औषधि करने लगा। इतने में रात हुई और चन्द्रमा ने प्रकाश किया। चाँद की ज्योति के पड़ते ही दूसरी रानी के शरीर में फफोले पड़ गये। अचानक दूर से किसी गृहस्थ के घर से मूसल की आवाज आई, उससे तीसरी रानी के सिर में ऐसा दर्द हुआ कि उसे मूर्च्छा आ गई। इतनी बात कह वेताल बोला कि अय राजा! इन तीनों में अति सुकुमार कौन है? राजा ने कहा जिसके मूड़ में पीर हो मूर्च्छा आई। यह बात सुन वेताल फिर उसी वृक्ष में जा लटका और वहाँ जा उसे उतार गठरी बाँध काँधे पर रख ले चला॥ १०॥

ग्यारहवीं कहानी।

वेताल बोला कि अय राजा विक्रम! पुण्यपुर नाम एक नगर है। वहाँ का वल्लभ नाम राजा था और उसके मन्त्री का नाम सत्यप्रकाश था। उस मन्त्री की स्त्री का नाम लक्ष्मी था। एक दिन राजा ने अपने दीवान से कहा कि जो राजा होके सुन्दर स्त्री से भोगविलास न करे, तो उसका राज्य करना निष्फल है। यह बात कह दीवान को राजकाज का भार दे आप सुख से ऐश करने लगा। राज्य की चिन्ता सब छोड़ दी और दिनरात आनन्द में रहने लगा। संयोगवश एक दिन मन्त्री अपने घर में उदास बैठा था। इतने में उसकी भार्या ने पूछा कि स्वामी इन दिनों आपको मैं बहुत दुर्बल देखती हूँ। वह बोला कि निशिदिन मुझे राज्य की चिन्ता रहती है, इससे शरीर दुर्बल है। राजा तो आठों पहर ऐश आराम में रहता है। तब मन्त्री की जोरू बोली कि हे पति! बहुत दिन तुमने राजकाज किया, अब थोड़े दिनों के लिये राजा से बिदा हो तीर्थयात्रा करो। उसकी यह बात सुन मन्त्री चुप हो रहा और

जब वहाँ से उठा तब दरबार के समय राजा के पास जा रुखसत ले तीर्थयात्रा करने निकल गया। जाते-जाते समुद्र के तीर सेतुबन्ध रामेश्वर में पहुँचा। वहाँ जाते ही महादेव का दर्शन कर, बाहर निकला था कि उसकी दृष्टि समुद्र की तरफ जा पड़ी, तो क्या देखता है कि एक ऐसा कञ्चन का पेड़ उसमें से निकला कि जिसके जमुर्रद के पत्ते, पुखराज के फूल और मूँगे के फल हैं। वह अति ही सुन्दर दृष्टि आया और उस वृक्ष पर अति सुन्दर एक नायिका हाथ में बीन लिये मधुर मधुर कोमल स्वरों में बैठी गाती है। एक घड़ी के बाद वह तरुवर समुद्र में लोप हो गया।

यह तमाशा देख, मन्त्री वहाँ से उलटा फिर अपने नगर में आया और राजा के पास जा, दण्डवत् कर हाथ जोड़ बोला कि महाराज! मैं एक अचरज देख आया हूँ। राजा ने कहा बयान कर, दीवान ने कहा महाराज! अगले मनुष्य कह गये हैं कि जो बात किसी की समझ में न आवे और कोई निश्चय न माने वह बात न कहनी चाहिये। पर इसे तो मैंने आँखों से प्रत्यक्ष देखा इससे मैं कहता हूँ। जहाँ रघुनाथजी ने समुद्र पर पुल बाँधा है, वहाँ जा देखता क्या हूँ कि सागर में से एक सोने का तरुवर निकला। उसमें जमुर्रद के पात, पुखराज के फूल थे और वह मूँगे के फलों से ऐसा लदा हुआ था कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता। उस पेड़ पर महासुन्दरी एक स्त्री हाथ में बीन लिये मीठे-मीठे स्वरों से गाती थी। एक घड़ी के बाद वह पेड़ समुद्र में छिप गया। यह बात सुन राजा दीवान को राज्य सौंप अकेला समुद्र के किनारे चला। कितने एक दिनों में वहाँ जा पहुँचा और महादेवजी के दर्शन को मन्दिर में गया। ज्योंही पूजाकर वह बाहर आया कि समुद्र से वही वृक्ष नायिका समेत निकला। राजा उसको देखते ही सागर में कूद उसी वृक्ष पर जा बैठा। तब वह वृक्ष राजा समेत पाताल को चला गया। वहाँ राजा को देख वह सुन्दरी बोली अय वीर पुरुष! किस वास्ते तू यहाँ आया है? राजा ने कहा तेरे रूप के लालच से। सुन्दरी ने कहा कि जो तू काली चौदस के दिन मुझसे न मिले तो मैं तेरे साथ विवाह करूँ। राजा ने यह बात मानी। उस सुन्दरी ने राजा से यह वचन लेकर राजा के साथ विवाह किया। जब अँधेरी चौदस आई तो उसने कहा अय राजा! तू आज मेरे निकट मत रह। यह सुनके राजा खड्ग हाथ में ले वहाँ से उठा और एक किनारे जा छिप कर देखता रहा। जब आधी रात हुई तब एक देव आया और उसने आते ही इसे गले से लगा लिया। यह देखते ही राजा खड्ग लेके धाया और कहा कि

हे राक्षस, पापी! मेरे सामने तू स्त्री को हाथ न लगा। पहिले मुझसे संग्राम कर। मुझे तभी तक भय था जब तक तुझे न देखा था। अब मैं निडर हूँ। इतनी बात कह खड्ग निकाल एक ऐसा हाथ मारा कि उसका रुण्ड से मुण्ड जुदा हो जमीन में तड़फने लगा। यह देख स्त्री बोली कि अय वीर पुरुष! तूने बड़ा उपकार किया। फिर कहा कि न सब पहाड़ों में लाल होते हैं, न सब शहरों में सतवन्ते आदमी, न हरएक वन में चन्दन उपजता है, न हरएक हाथी के मस्तक में मोती होता है। तब राजा ने पूछा यह राक्षस किस वास्ते कृष्ण चतुर्दशी को तेरे पास आया था? वह बोली कि मेरे पिता का नाम विद्याधर है और सुन्दरी मेरा नाम है। यह नियत था कि मेरे बिना मेरा बाप भोजन न करता था। एक दिन भोजन की बिरियाँ मैं घर में न थी। तब पिता ने मुझ पर क्रोध कर मुझे शाप दिया कि तुझे काली चौदस के दिन राक्षस गले से आन के लगाया करेगा। यह सुनके मैं बोली कि पिता शाप तो तुमने दिया, परन्तु अब मेरे ऊपर कृपा कीजिये। तब पिता ने कहा कि महावीर पुरुष जब उस राक्षस को मारेगा, तब तू इस शाप से छूटेगी। सो मैं आज उस शाप से छूटी और अब मैं अपने पिता को नमस्कार करने जाऊँगी।

राजा बोला कि जो तू मेरे उपकार को माने तो एक बार मेरे राज्य को चल के देख, पीछे अपने पिता के दर्शन को जाइयो। वह बोली कि अच्छा जो आपने कहा सो मुझे अंगीकार है। तब राजा उसे साथ ले अपने राजधानी में आया। वहाँ ब्याह के बाजन बजने लगे और सारे नगर में खबर हुई कि राजा आया। तब घर-घर बधाई मंगलाचार होने लगे और सम्पूर्ण नगर के लोग आके दरबार में मुबारकबादियाँ देने लगे। राजा ने बहुत सा दान-पुण्य किया। कई एक दिन पीछे वह सुन्दरी बोली कि महाराज! अब मैं अपने बाप के यहाँ जाऊँगी। तब राजा ने उदास होकर कहा कि अच्छा सिधारो। जब इसने राजा को उदास देखा तो कहा महाराज! मैं न जाऊँगी। राजा ने कहा किस वास्ते तू ने अपने बाप के यहाँ का जाना बन्द किया? वह बोली कि अब मैं मनुष्य की हो चुकी और पिता मेरा गन्धर्व है। यदि मैं जाऊँगी तो वह मेरा अनादर करेगा; इसलिये मैं नहीं जाती। यह सुन राजा बहुत प्रसन्न हुआ और उसने लाखों रुपये का दान-पुण्य किया। राजा का यह हाल सुनने से दीवान की छाती फट गई और वह मर गया। इतनी बात कह वेताल बोला, अय राजा! किस लिए वह मन्त्री मर गया? तब राजा वीर विक्रमादित्य ने कहा कि मन्त्री ने देखा कि राजा तो ऐश करने लगा

और राज्यकाज की चिन्ता सब भुला दी, प्रजा अनाथ हुई। अब मेरा कहा कोई न मानेगा। इसी चिन्ता से वह मर गया। यह सुन वेताल फिर उसी वृक्ष पर जा लटका। राजा फिर उसी तरह से उसको बाँध और काँधे पर रख ले चला॥ ११॥

बारहवीं कहानी।

वेताल बोला कि अय राजा वीर विक्रमादित्य! चूड़ापुर नाम एक नगर है, वहाँ का चूड़ामणि नाम राजा था। जिसके गुरु का नाम देवस्वामी और उसके बेटे का नाम हरस्वामी था। वह कामदेव के समान सुन्दर, शास्त्र में बृहस्पति के बराबर और धन में कुबेर सा था। वह ब्राह्मण की बेटी को जिसका नाम लावण्यवती था ब्याह लाया। उन दोनों में बहुत प्रीति हुई। एक दिन गरमी के मौसम में रात के समय चौबारे की छत पर दोनों अचेत पड़े सोते थे। संयोगवश स्त्री के मुँह पर से ओढ़नी सरक गई। एक गन्धर्व विमान पर बैठा हवा में उड़ा हुआ कहीं जाता था। अचानक उसकी दृष्टि इस पर पड़ी। वह विमान को नीचे लाया और उस सोती हुई को विमान पर ले उड़ा। कितनी देर के पीछे ब्राह्मण सोते से उठा, तो देखता क्या है कि स्त्री नहीं। तब वह घबराया और वहाँ से उतरकर उसने सम्पूर्ण घर को ढूँढ़ा। जब वह वहाँ भी न मिली तो सारी नगरी की गली-गली और कूचा-कूचा वह ढूँढ़ता फिरा। परन्तु कहीं भी उसे न पाया। तब अपने जी में कहने लगा कि न जाने कौन उसे ले गया और वह कहाँ गई। निदान जब कुछ वश न चला तब अन्त को लाचार हो पश्चात्ताप करता हुआ घर को आया और वहाँ से फिर दुबारा ढूँढ़ा। परन्तु न पाया। जब उस बिना घर सूना दृष्टि आया, तब बेकली से बेवश हो, हाय प्राणप्यारी! हाय प्राणप्यारी!! कहके पुकारने लगा। उसके वियोग से वह अति व्याकुल हो, गृहस्थी छोड़, बैराग ले, लँगोटी बाँध, विभूति मल, माला पहन और नगर तज तीर्थयात्रा को निकला। नगर-नगर, गाँव-गाँव घूमता हुआ वह एक नगर में दोपहर के समय जा पहुँचा। जब वह भूख से निपट लाचार हुआ, तब ढाक के पत्तों का दोना बना हाथ में ले और एक ब्राह्मण के घर जा उससे कहा कि मुझे भोजन भिक्षा दो। जब प्रीति के वश आदमी होता है तब उसे धर्म, जाति और खाने-पीने का कुछ विचार नहीं रहता और भले ही निरादर हो, वह जहाँ पाता है वहीं खाता है। जब ब्राह्मण से इसने भीख माँगी तब उसने इससे दोना ले घर में जा उसे खीर से भर ला दिया। यह उस दोने को लिये

तालाब के किनारे आया। वहाँ एक बड़हर का वृक्ष था। उसकी जड़ पर दोना रख वह सरोवर में मुँह-हाथ धोने गया। इतने में उस वृक्ष की जड़ से एक काला नाग निकल उस दोने में मुँह से गरल डाल चला गया। जिससे सम्पूर्ण दोना विष से भर गया। उधर ब्राह्मण भी हाथ-मुँह धोकर आया। परन्तु उसे यह वृत्तान्त मालूम न था और भूख भी बहुत लगी थी। आते ही उसने सारी खीर खा डाली। खाते ही उसे विष चढ़ा। तब इसने उस ब्राह्मणी से जाकर कहा कि तैंने मुझको विष दिया और मैं अब इससे मरता हूँ। इतना कह वह घूमकर गिरा और मर गया। तब उस ब्राह्मण ने इसे मुआ देख अपनी स्वकीया स्त्री को घर से निकाल कहा कि ब्रह्महत्यारी तू यहाँ से जा। इतनी कथा कह वेताल बोला कि अय राजा! इनमें से ब्रह्महत्या का पाप किसे हुआ? राजा ने कहा कि साँप के मुँह में तो विष होता ही है, इससे उसे पाप नहीं और उस स्त्री ने भी भूखा जान के भिक्षा दी, इससे उसे भी पाप नहीं और ब्राह्मण ने भी अनजाने खीर खाई तिससे उसे भी पाप नहीं। निदान इनमें से जिसको कोई पाप लगावे वही पापी है। यह सुन वेताल फिर उसी तरुवर पर जा लटका और राजा भी जा उसे उतार और बाँध तथा काँधे पर रख, वहाँ से चला॥ १२॥

तेरहवीं कहानी।

वेताल बोला कि अय राजा! एक चन्द्रहृदय नाम नगरी है और उसका रणधीर नाम राजा था। उस नगरी में धर्मध्वज नाम एक सेठ था और उसकी बेटी का नाम शोभनी था। वह अति सुन्दरी थी। उसकी जवानी दिन-दिन बढ़ती थी और रूप उसका पल-पल अधिक होता था। संयोगवश उस नगरी में रातों को चोरी होने लगी। जब चोरों के हाथ से महाजनों ने बहुत दुःख पाया तब वे इकट्ठे हो राजा के निकट जाकर कहने लगे कि महाराज! चोरों ने नगर में बहुत उपाधि की है। अब हम इस शहर में नहीं रह सकते। राजा ने कहा जो हुआ सो हुआ, परन्तु अब आगे दुःख न पाओगे। मैं उनका यत्न करता हूँ। यह कह राजा ने बहुत से लोग बुलवा चौकी को भेज दिये और चौकी पहरे का ढब उनको बता दिया और हुक्म दिया कि जहाँ चोरों को पाओ बिना पूछे मार डालो। इस तरह लोग रात को नगर की रखवारी करने लगे। फिर भी चोरी होती थी। तब फिर सम्पूर्ण साहूकार इकट्ठे होकर राजा के पास आये और विनय की कि महाराज! आपने पहरुये भेजे, तब भी चोर कम न हुए और नित्य चोरी होती है। राजा ने कहा इस समय तुम बिदा

हो, आज की रात से नगर की चौकी देने मैं निकलूँगा। यह सुनके राजा से विदा हो वे अपने-अपने घर गये और जब रात हुई तब राजा अकेला ढाल तलवार ले, पाँव प्यादे नगरी की रक्षा करने लगा। इतने में आगे जाके देखे तो एक चोर सामने से चला आता है। राजा ने उसे देखकर पुकारा कि तू कौन है? वह बोला कि मैं चोर हूँ, अब तू बता कि कौन है? राजा ने कहा मैं भी चोर हूँ। यह सुन चोर प्रसन्न हो बोला कि आओ मिलकर चोरी करने चलें। यह बात आपस में ठहरा राजा और चोर बातें करते हुए एक मुहल्ले में पैठे और कितने ही एक घरों में चोरी कर मालमता ले नगर के बाहर निकल एक कुएँ पर आये और उसमें उतर पातालपुरी में जा पहुँचे। वह चोर राजा को दरवाजे पर खड़ा कर धन-दौलत अपने मन्दिर में ले गया। इतने में उसके घर में से एक दासी निकली। वह राजा को देखके कहने लगी कि महाराज! तुम कहाँ इस दुष्ट के साथ यहाँ आये। अब भला इसी में है कि वह आने न पावे और तुमसे जहाँ तक भागा जावे वहाँ तक तेज भागो। नहीं तो वह आते ही तुम्हें मार डालेगा। राजा ने कहा मैं तो राह नहीं जानता किधर को जाऊँ। तब उस चेरी ने बाट दिखा दी और राजा अपने मन्दिर को आया। दूसरे दिन राजा ने अपनी सब सेना साथ ले उस कुएँ की राह पातालपुरी में जा चोर का सम्पूर्ण घरबार घेर लिया। परन्तु चोर किसी और राह से निकल उस नगर का मालिक जो देव था उसके पास गया और विनय की कि एक राजा मेरे मारने को घर पर चढ़ आया है सो तुम मेरी इस समय सहायता करो, नहीं तो तुम्हारी पुरी का बास छोड़ और नगर में जा बसता हूँ। यह सुन राक्षस ने प्रसन्न होकर कहा कि तू मेरे लिये खाने को लाया है, मैं तुझसे बहुत प्रसन्न हुआ। यह कहकर जहाँ राजा कटक लिए हवेली घेरे हुए था, वहाँ वह देव आ आदमियों और घोड़ों को खाने लगा। राजा उस देव की सूरत देखकर भागा और जिन लोगों से भागा गया वे तो बचे और बाकी को देव ने खा लिया।

निदान राजा अकेला भागा आता था कि चोर ने आकर ललकारा कि तू राजपूत होकर लड़ाई से भागता है। यह सुनते ही राजा फिर खड़ा हुआ और दोनों सम्मुख हो युद्ध करने लगे। निदान राजा उसे वश में कर मुशकें बाँध नगर में ले आया। फिर उसको नहलवा धुलवा अच्छे-अच्छे वस्त्र पहिना एक ऊँट पर बिठला ढँढोरिया साथ कर सारे नगर में घुमाय उसके वास्ते शूली खड़ी करने का हुक्म दिया। शहर के लोगों में से जो उसे देखता

था सो कहता था कि इसी चोर ने सम्पूर्ण नगर लूटा है और अब इसे राजा शूली दे देगा । जब उस धर्मध्वज सेठ की हवेली के नीचे वह चोर गया, तब उस सेठ की बेटी ने ढँढोरे की आवाज सुन, अपनी दासी से पूछा कि यह काहे की डौंड़ी बजती है । वह बोली जो चोर इस नगर में चोरी करता था उसे राजा पकड़ लाया है और अब शूली देगा । यह सुनके देखने को वह भी दौड़ आई और चोर का रूप यौवन देखते ही मोहित हो गई । उसने अपने बाप से जाकर कहा कि तुम इस समय राजा के पास जाओ और उस चोर को छुड़ा लाओ । सेठ बोला कि जिस चोर ने राजा का सम्पूर्ण नगर मूसा है और जिसके लिये सारा कटक कटा, उसे मेरे कहे से वह क्योंकर छोड़ेगा । तब उसने कहा कि जो तुम्हारे सर्वस्व दिये से भी राजा उसे छोड़े, तो तुरन्त तुम उसे छुड़ा लाओ और जो वह न आवेगा तो मैं भी अपनी जान दे दूँगी । यह सुन सेठ ने राजा से जाकर कहा कि महाराज ! पाँच लाख रुपये मुझसे ले लीजिये और इस चोर को छोड़ दीजिये । राजा ने कहा इस चोर ने सारा नगर मूसा और सम्पूर्ण लश्कर इसी के कारण से नष्ट हुआ, इसे मैं किसी तरह न छोड़ूँगा । जब राजा ने उसकी बात न मानी तो वह लाचार फिर कर अपने घर को आया और अपनी बेटी से कहा कि जितना कहने का धर्म था मैंने कहा, परन्तु राजा ने न माना । इतने अर्से में चोर को नगरी के फेरे दिलवा कर शूली के पास ला खड़ा किया और चोर ने उस बनिये की बेटी का अहवाल जो सुना तो पहिले खिलखिलाकर हँसा, फिर डकरा-डकरा रोने लगा । इतने में लोगों ने उसे शूली पर खैंच लिया । बनिये की बेटी, उसके मरने की खबर पाकर, सती होने के लिए उसी जगह पर गई । उसने उस चोर को शूली से उतार और उसका सिर गोद में रख वह चिता पर जलने को बैठी । संयोग-वश वहाँ एक देवी का मन्दिर था । जैसे ही इसने चाहा कि चिता में आग दिलवावे, वैसे ही मन्दिर से देवी निकलकर, बोली कि अय पुत्री ! मैं तेरे साहस पर संतुष्ट हुई, तू वर माँग । वह बोली माता जो तू मुझसे संतुष्ट हुई है तो इसको जी दान दे । तब देवी बोली कि ऐसा ही होवेगा । यह कहकर देवी ने पाताल से अमृत ला चोर को जिला दिया । इतनी कथा कह वेताल ने पूछा, अय राजा ! बतलाओ कि चोर पहिले किस कारण हँसा और पीछे किस लिए रोया ? राजा ने कहा जिस वास्ते हँसा वह कारण मैं जानता हूँ और जिस वास्ते वह रोया वह भी मुझे मालूम है, चोर ने जी में विचारा

कि मरने के समय उसने मुझसे प्रीति की; भगवान की गति कुछ जानी नहीं जाती । देखो वह कुलक्षण को लक्ष्मी, कुलहीन को विद्या, मूर्ख को सुन्दरी स्त्री देता है और पहाड़ पर वर्षा करता है। ऐसी-ऐसी बातें सोचकर चोर हँसा। फिर अपने मन में उसने विचारा कि यह जो मेरे वास्ते अपना सर्वस्व देती है, तो अब इसका मैं क्या उपकार करूँगा । यह समझ कर वह रोया । यह सुन वेताल उसी वृक्ष पर जा लटका । राजा फिर वहाँ गया और उसे खोल गठरी बाँध और काँधे पर रख ले चला ॥ १३ ॥

चौदहवीं कहानी ।

वेताल बोला कि अय राजा विक्रम ! कुसुमावती नाम एक नगरी है । वहाँ का सुविचार नाम राजा था । उसकी बेटी का नाम चन्द्रप्रभा था । जब वह वर योग्य हुई तो एक दिन वसन्तऋतु में सखियों को साथ ले बाग की सैर को चली । वहाँ जनाने के बन्दोबस्त के पहिले एक ब्राह्मण का लड़का बीस वर्ष का अति सुन्दर मनस्वी नामक, कहीं से फिरता हुआ उस बाग में आ, एक वृक्ष के नीचे ठंढी छाँह पाकर सो रहा था । राजा के नौकरों ने आ उस बाड़ी में बन्दोबस्त किया पर उस ब्राह्मण के बेटे को किसी ने न देखा और वह उस वृक्ष के नीचे सोता रहा । राजकन्या सखियों समेत बाग में आई और सहेलियों के साथ सैर व तमाशा देखती हुई वहाँ आई जहाँ वह ब्राह्मण का बेटा सोता था । इसका वहाँ पहुँचना कि वह भी उनके पाँव की आहट से उठ बैठा । ज्योंही दोनों की चार नजरें हुईं त्योंही वे कामदेव के ऐसे वश हुए कि उधर ब्राह्मण का लड़का मूर्च्छा खा भूमि पर गिरा और उधर बेसुध हो राजकन्या के पाँव काँपने लगे। परन्तु उसे वहीं सखियों ने हाथों-हाथ थाम लिया । फिर उसे चण्डोल में लिटा घर को ले आईं और यहाँ ब्राह्मण का लड़का ऐसा बेसुध पड़ा था कि अपने तन मन की कुछ खबर न रखता था । इस अर्से में दो ब्राह्मण शशी और मूलदेव नामक कामरू देश से विद्या पढ़े हुए वहाँ आ निकले । मूलदेव ने उस ब्राह्मण के लड़के को पड़ा देख कहा, अय शशी ! यह बालक ऐसा बेसुध यहाँ क्यों पड़ा है ? वह बोला नायिका ने भौं की कमान से नयन के तीर मारे हैं । इससे यह बेसुध पड़ा है । मूलदेव ने कहा इसे उठाना चाहिये । उसने कहा तुझे उठाने से क्या प्रयोजन है । उसने शशी का कहना न माना और उसे पानी छिड़क कर उठाया और पूछा कि तेरी क्या दशा हुई है । वह बालक बोला कि दुःख उससे कहिये, जो दुःख को दूर करे और जो सुनके दूर न कर सके उससे कहने से क्या लाभ है ।

मूलदेव बोला कि अच्छा तू अपनी पीर हमारे आगे कह । हम अवश्य दूर करेंगे । यह सुनके वह बोला कि अभी राजकन्या सखियों को साथ लिये आई थी, सो उसके देखने से मेरी यह गति हुई है । जो वह मिलेगी तो मैं अपने प्राण रखूँगा नहीं तो नहीं । तब मूलदेव ने कहा कि यदि हमारे स्थान पर चले तो उसके मिलने का हम यत्न कर देंगे । नहीं तो तुझे बहुत सा धन देंगे । तब मनस्वी बोला कि संसार में भगवान् ने बहुत से रत्न पैदा किये हैं, पर स्त्रीरत्न सबसे उत्तम है और उसी के लिए मनुष्य धन की इच्छा करते हैं । जब नारी को त्यागा तब धन लेके क्या करेंगे ? जिनको स्वरूपवता स्त्री न मिले उनसे संसार में पशु भले हैं । धर्म का फल है धन, धन का फल है सुख और सुख का फल है नारी । जहाँ नारी नहीं, वहाँ सुख कहाँ ? यह सुनके मूलदेव बोला कि जो तू माँगेगा सोई दूँगा । तब उसने कहा अय ब्राह्मण ! मुझे वही कन्या दिला दे । मूलदेव ने कहा, अच्छा तू हमारे साथ चल । तुझे वही कन्या दिला देंगे । निदान मूलदेव बहुत सा धैर्य देकर उसे अपने घर ले गया और वहाँ जाकर दो गुटके बनाये । एक गुटका उस ब्राह्मण को देकर कहा कि जब इसे मुँह में रक्खेगा, तब तू बारह वर्ष की कन्या हो जायगा और जिस समय तू इसे मुँह से निकालेगा, तो ज्यों का त्यों पुरुष हो जायगा । इसे तू अपने मुँह में रख । मनस्वी ने एक गुटका अपने मुँह में रखा तो वह बारह वर्ष की कन्या हो गया और दूसरे गुटके को मूलदेव ने अपने मुँह में रखा तो अस्सी वर्ष का डोकरा हो गया । तब मूलदेव उस कन्या को लिए हुए राजा के यहाँ गया । राजा ने ब्राह्मण को देख दण्डवत् कर, बैठने को आसन दिया और एक आसन उस लड़की को भी दिया । तब ब्राह्मण ने यह श्लोक पढ़ आशिष दी कि जिसकी शोभा तीनों लोक में फैल रही है, जिसने वामन हो बलि को छला, जिसने वानर साथ ले समुद्र का पुल बाँधा, जिसने पर्वत हाथ पर रख, इन्द्र से व्रज के ग्वालबाल बचाये, वही वासुदेव तुम्हारी रक्षा करें । यह सुनकर राजा ने पूछा कि हे महाराज ! आप कहाँ से पधारे हैं ? मूलदेव बोला कि गंगापार से मैं आया हूँ और वहीं मेरा घर है । मैं अपने बेटे की बहू लेने गया था, पीछे मेरे गाँव में भागड़ पड़ी, सो मैं नहीं जानता कि ब्राह्मणी और मेरा पुत्र भागके कहाँ गये और अब मैं इसको साथ लिए हुए किस तरह ढूँढूँगा । इससे उचित यह है कि आपके पास इसे छोड़ जाऊँ और जब तक मैं न आऊँ तब तक इसे यत्न से रखना ।

यह बात ब्राह्मण की सुन राजा अपने चित्त में चिन्ता करने लगा कि

अति सुन्दरी तरुण स्त्री को मैं किस तरह रखूँ और जो नहीं रखता तो यह ब्राह्मण शाप दे देगा, जिससे मेरा राज्य भंग होगा। राजा यह अपने जी में विचारकर बोला कि महाराज! जो आपने आज्ञा की सो मुझे अंगीकार है और अपनी पुत्री को बुलाकर कहा कि बेटी इस ब्राह्मण की बहू को ले जाके बहुत यत्न से रखो और सोते, जागते, खाते, पीते, चलते, फिरते क्षण भर भी अपने पास से इसे जुदा मत कीजियो। यह सुन राजकन्या उस ब्राह्मण की बहू का कर धर अपने मन्दिर में ले गई और रात के समय दोनों एक सेज पर सोकर आपस में बातें करने लगीं। बातें करते-करते ब्राह्मण की बहू बोली कि हे राजकन्या! तू किस दुःख के मारे अति दुर्बल हो रही है सो मुझसे कह? राजपुत्री बोली कि एक दिन वसन्तऋतु में सखियों को साथ ले मैं बाग की सैर को गई थी। वहाँ पर एक ब्राह्मण अति सुन्दर कामदेव के समान मैंने देखा और उसकी मेरी चार नजरें हुईं। उधर वह बेहोश हुआ इधर मैं। तब सखियाँ मेरी अवस्था देख मुझे घर ले आईं। उसका नाम-ग्राम मैं कुछ नहीं जानती। मेरी आँखों में उसकी सूरत समा रही है। मुझे खाने-पीने की भी कुछ रुचि नहीं। इसी पीर से मेरे शरीर की यह दशा हुई है।

यह सुनके वह ब्राह्मण की बहू बोली कि जो तेरे प्रीतम को तुझसे मिला दूँ तो मुझे तू क्या देगी? राजकन्या बोली कि सदा तेरी दासी हो रहूँगी। यह सुनके मनस्वी ने वह गुटका अपने मुँह से निकाल डाला और वह पुरुष हो गया। तब तो राजकन्या उसे देखकर शरमाई। ब्राह्मण के लड़के ने गन्धर्वविवाह की रीति से उसके साथ अपना विवाह किया। नित्य प्रति वह उसी तरह रात को पुरुष होता और दिन को स्त्री बन जाता। निदान छः महीने पीछे राजकन्या के गर्भ रहा। एक दिन का वृत्तान्त है कि राजा सारे कुटुम्ब को साथ लेकर दीवान के घर ब्याह में गया। वहाँ मन्त्री के बेटे ने उस स्त्रीवेषधारी ब्राह्मण के लड़के को देखा। देखते ही वह मोहित हो गया और अपने एक मित्र के आगे कहने लगा कि जो यह नारी मुझे न मिलेगी तो मैं अपना प्राण तजूँगा। इस असे में राजा न्योता खा कुनबे समेत अपने मन्दिर को आया। परन्तु मन्त्री के बेटे के विरह के दाह से उसकी निपट कठिन दशा हो गई। यहाँ तक कि उसने अन्न-पानी छोड़ दिया। यह गति देख उसके मित्र ने जाकर मन्त्री से कहा। मन्त्री ने यह हाल सुन, राजा से जा कहा कि महाराज! उस ब्राह्मण की स्त्री की प्रीति में मेरे बेटे की बुरी दशा है। उसने खाना-पीना छोड़ दिया है। यदि आप कृपा करके ब्राह्मणी

को मुझे देवें, तो उसकी जान बचे। यह सुन राजा क्रोध करके बोला कि अरे मूर्ख! ऐसी अनीति करना राजाओं का धर्म नहीं है। एक मनुष्य की थाती दूसरे को बिना उसकी आज्ञा देना, क्या उचित है? जो तू मुझसे यह बात कहता है। यह सुनके प्रधान निराश हो अपने घर आया; परंतु उस लड़के का दुःख देखकर उसने भी अन्नजल छोड़ दिया। जब तीन दिन दीवान को बिना अन्नजल के बीते तब कारबारियों ने इकट्ठे होकर राजा से जाकर विनय की कि महाराज! मन्त्री का पुत्र अब तब हो रहा है और उसके मरने से दीवानजी भी न बचेंगे और दीवान के मरने से राजकाज न चलेगा। इससे भला यह है कि जो हम विनय करें सो अङ्गीकार हो। यह सुन राजा ने आज्ञा दी कि कहो। तब उनमें से एक मनुष्य बोला कि महाराज! उस बूढ़े ब्राह्मण को गये बहुत दिन हुए, अब तक वह फिरा नहीं। भगवान् जाने मर गया या जीता है। इससे उचित यह है कि ब्राह्मण की बहू को मन्त्री के बेटे को दे, अपना राज्य स्थिर रखिये और कदाचित् ब्राह्मण आवे तो गाँव धन देकर राजी कर लेना। यदि इस पर राजी न हो तो उसके लड़के का ब्याह कर बिदा कर दीजियेगा। यह सुन राजा ने उस ब्राह्मण की बहू से बुलाकर कहा कि तू मेरे मंत्री के पुत्र के घर जा। वह बोली कि अन्य पति पाके स्त्री का धर्म नष्ट होता है। राजा की सेवा करने से ब्राह्मण का धर्म जाता है, गाय दूर की चराई से खराब होती है और अधर्म करने से धन जाता है। इतना कह वह फिर बोली कि जो महाराज तुम मुझे मन्त्री के बेटे को देते ही हो, तो उससे यह बात ठहरा लीजिये कि जो कुछ मैं कहूँगी, वह वही करेगा। तब मैं उसके घर जाऊँगी। राजा बोला कि कहो वह क्या करे? स्त्री ने कहा महाराज! मैं ब्राह्मणी हूँ, वह क्षत्रिय है, इससे उचित यह है कि वह सब तीर्थों की यात्रा कर आवे। तब मैं उसके साथ घर करूँगी। यह बात सुनके राजा ने मन्त्री के बेटे को बुलाकर कहा कि तू तीर्थयात्रा कर आ तब उस ब्राह्मणी को तुझे देवेंगे।

राजा की बात सुन, दीवान के बेटे ने कहा, महाराज! वह मेरे घर जा बैठे, तो मैं तीर्थ को जाऊँ। यह सुन राजा ने ब्राह्मणी से कहा, जो तुम पहले उसके घर में जाके रहो, तो वह तीर्थयात्रा को जावे। लाचार हो राजा के कहने से ब्राह्मणी उसके घर में जा रही। तब प्रधानपुत्र ने अपनी स्त्री से कहा कि तुम दोनों प्रसन्नतापूर्वक सम्मत करके रहना, आपस में किसी तरह का झगड़ा लड़ाई न करना और बिराने घर कभी न जाना। इतनी सीख दे

वह तो तीर्थयात्रा को चला गया, इधर उसकी बहू सौभाग्यसुन्दरी ब्राह्मण की बहू को अपने साथ ले एक बिछौने पर रात को लेटी हुई इधर-उधर की बातें करने लगी। कितनी ही देर के बाद दीवान के पुत्र की बहू ने ब्राह्मण की बहू से यह बात कही कि अय सखी ! इस समय मैं विरह से जली जाती हूँ, मेरा मतलब किस तौर से हासिल हो। ब्राह्मणी बोली यदि तेरे मतलब को मैं कर लाऊँ तो तू मुझे क्या देगी ? उसने कहा सदा तेरे आगे हाथ जोड़े आज्ञाकारी रहूँगी। तब यह अपने मुँह से गुटके को निकाल पुरुष बन गया और नितप्रति इसी तरह से रात को पुरुष बन जाता, दिन को स्त्री। इन दोनों में बड़ी प्रीति हो गई। निदान इसी तरह से छः महीने बीते। मन्त्री का पुत्र भी आ पहुँचा। उसके आने की खबर सुन मङ्गलाचार होने लगा और इधर ब्राह्मण की बहू ने गुटका मुँह में से निकाल पुरुष बन खिड़की की राह महल से निकल अपनी राह ली। कितनी एक देर में वह उस मूलदेव ब्राह्मण के पास पहुँचा जिसने इसे गुटका दिया था और उससे सब अपनी आदि अन्त की व्यवस्था कही। तब मूलदेव ने सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनकर गुटका इससे ले अपने साथी शशी नाम ब्राह्मण को दिया और दोनों ने गुटके अपने-अपने मुँह में रख लिये। एक बूढ़ा बन गया और एक बीस वर्ष का।

फिर ये दोनों राजा के यहाँ गये। राजा ने देखते ही दण्डवत् कर उनके बैठने को आसन दिये और इन्होंने भी आशिष दी। राजा ने इनकी कुशल-क्षेम पूछ मूलदेव से कहा कि इतने दिन तुम्हें कहाँ लगे ? ब्राह्मण बोला कि महाराज ! इसी पुत्र को ढूँढ़ने को गया था। सो इसे खोजकर आपके पास ले आया हूँ। अब इसकी बहू को दो तो मैं बहू-बेटे को अपने घर ले जाऊँ। तब राजा ने ब्राह्मण के आगे वह सब वृत्तान्त कह सुनाया। ब्राह्मण ने सुनते ही अति कोप कर राजा से कहा कि यह कौनसा व्यवहार है, जो तुमने मेरे बेटे की बहू और को दे दी। अच्छा ! जो तुमने चाहा सो किया, पर अब मेरा शाप लो। तब राजा बोला कि हे देवता ! तुम क्रोध मत करो। जो तुम कहो सो मैं करूँ। ब्राह्मण बोला अच्छा जो मेरे शाप से डरकर मेरा कहा करते हो तो अपनी पुत्री मेरे लड़के को ब्याह दो। यह सुन राजा ने एक ज्योतिषी को बुलाकर शुभ लग्न ठहरा अपनी पुत्री उस ब्राह्मण के लड़के से ब्याह दी। तब ये दोनों वहाँ से राजकन्या को दान-दहेज समेत ले राजा से विदा हो अपने गाँव में आये। यह खबर सुन वह मनस्वी ब्राह्मण भी वहाँ आ उससे झगड़ने लगा कि मेरी स्त्री मुझे दे। तब शशी बोला कि मैं दस पञ्चों में

ब्याह कर लाया हूँ । यह स्त्री मेरी है । उसने कहा इसके तो मेरा गर्भ है, तेरी किस तरह से है ? ऐसे ही वे आपस में विवाद करने लगे । मूलदेव ने दोनों को बहुत समझाया परन्तु किसी ने उसका कहा न माना । इतनी कथा कह, वेताल बोला कि अय राजा, वीर विक्रमादित्य ! कहो वह किसकी भार्या हुई ? राजा ने कहा, शशी की । वेताल बोला गर्भ तो मनस्वी का था, स्त्री इसकी किस तरह हुई ? राजा ने कहा गर्भ जो था वह किसी को मालूम न था और उसने दस पञ्चों में बैठके ब्याह किया । इसलिये स्त्री शशी की ठहरी और जो लड़का होगा वह शशी की क्रिया कर्म का अधिकारी होगा । यह बात सुन वेताल उसी वृक्ष में जा लटका । तब राजा गया और वेताल को बाँध और काँधे पर रख ले चला ॥ १४ ॥

पन्द्रहवीं कहानी ।

वेताल बोला कि अय राजा ! हिमाचल नाम एक पर्वत है । वहाँ गन्धर्वों का नगर था और वहाँ का राज्य जीमूतकेतु करता था । एक समय उसने पुत्र के हेतु कल्पवृक्ष की बहुत पूजा की । तब कल्पवृक्ष प्रसन्न हो बोला कि अय राजा ! तेरी सेवा देख मैं सन्तुष्ट हुआ हूँ, जो तू चाहे सो वर माँग । राजा ने कहा कि एक पुत्र मुझे दो, जिससे मेरा राज्य और नाम रहे । उसने कहा ऐसा ही होगा । कितने ही दिनों के बाद राजा के बेटा हुआ । उसे बड़ी खुशी हुई और बहुत सा दान-पुण्य कर और ब्राह्मणों को बुला, उसका नामकरण किया । ब्राह्मणों ने उसका नाम जीमूतवाहन धरा । जब वह बारह वर्ष का हुआ, तब उसके पिता ने बड़ी धूम से उसका ब्याह किया । जीमूतवाहन शिव का भक्त था और सब शास्त्र पढ़के बड़ा ही ज्ञानी, ध्यानी, साहसी, शूरवीर, धर्मात्मा और पण्डित हुआ था । उस समय उसकी बराबर कोई न था और जितने उसके राज्य में लोग थे, वे सब अपने-अपने धर्म में सावधान थे । जब वह जवान हुआ, तब उसने भी कल्पवृक्ष की बहुत सेवा की । तब कल्पवृक्ष ने प्रसन्न हो उससे कहा कि जिस बात की तुझे इच्छा हो सो माँग, मैं तुझे दूँ । जीमूतवाहन बोला कि जो आप मुझसे प्रसन्न हुए हो, तो मेरी सब प्रजा का दरिद्र दूर कर दो और जितने लोग मेरे राज्य में हैं वे सब माल दौलत में बराबर हो जावें । तब कल्पवृक्ष ने कहा कि ऐसा ही होगा । सब लोगों के पास इतना धन हो गया कि कोई किसी का हुक्म न मानता था और कोई किसी का काम न करता था । जब उस राजा के लोग ऐसे हो गये, तब जो भाई-बन्धु उस राजा के थे, वे आपस में विचार करने लगे कि बाप-बेटे

तो दोनों धर्म के वश हुए और लोग इनका हुक्म नहीं मानते। इससे उत्तम यह है कि इन दोनों को पकड़ कर कैद कीजिए और राज्य इनका छीन लीजिये। राजा तो उन लोगों की तरफ से गाफिल था और उन्होंने आपस में मनसूबा बाँध और फौज ले, राजा का मन्दिर जा घेरा। जब यह खबर राजा को पहुँची, तब राजा ने अपने बेटे से कहा अब क्या करें? राजकुमार बोला, महाराज! आप यहाँ विराजिये आपके धर्म से अभी जाके शत्रुओं को मारे लेता हूँ। राजा ने कहा, अय पुत्र! यह शरीर अनित्य है और धन भी स्थिर नहीं है। मनुष्य जन्मा तो मृत्यु भी उसके साथ ही है। इससे अब राज्य छोड़ धर्मकार्य किया चाहिये। ऐसे शरीर के कारण और इस राज्य के वास्ते महापाप करना उचित नहीं, क्योंकि राजा युधिष्ठिर भी महाभारत करके पीछे पछताये थे। यह सुन उसके बेटे ने कहा, अच्छा अपना राज्य गोत्रियों को दीजिये और आप चलके तपस्या कीजिये। यह बात ठहराय भाई-भतीजों को बुलवा राज्य दे, दोनों बाप-बेटे मलयाचल पर्वत के ऊपर गये और वहाँ जा कुटी बना रहने लगे।

जीमूतवाहन से और एक ऋषि के बेटे से आपस में मित्रता हो गई। एक दिन उस पर्वत के ऊपर राजपुत्र और ऋषिपुत्र दोनों सैर के वास्ते गये। वहाँ भवानी का मन्दिर दृष्टि आया। उस मन्दिर में एक राजकन्या बीन लिये हुए देवी के आगे गा रही थी। उस कन्या की और जीमूतवाहन की चार नजरें हुईं और दोनों की लगन लग गई। परन्तु राजकन्या मन मार लाज की मारी अपने घर को पधारी और इधर यह भी उस ऋषि के बेटे की शर्म के मारे अपने स्थान पर आया। वह रात, उन दोनों की बड़ी बेकली से कटी। प्रभात होते ही उधर से राजकन्या देवी के मन्दिर को चली और इधर से राजकुमार ने जाते हुए देखा कि राजकन्या जाती है। तब इसने उसकी सखी से जा पूछा कि यह किसकी कन्या है? सखी ने कहा यह मलयकेतु राजा की पुत्री है। मलयावती इसका नाम है और अभी कुमारी है। यह कह सखी ने राजपुत्र से पूछा कि कहो सुन्दर पुरुष! तुम कहाँ से आये हो और तुम्हारा क्या नाम है? यह बोला कि विद्याधरों का राजा जीमूतकेतु है। उसका मैं सुत हूँ और जीमूतवाहन मेरा नाम है। राज्यभङ्ग होने से पिता-पुत्र हम दोनों यहाँ आके रहे हैं। सखी ने यह सुनकर, सब बातें राजकन्या से जा कहीं। यह सुन राजकन्या अपने जी में बहुत दुःख पा, घर को आई और रात को चिन्ता करके सो रही। यह दशा उसकी देख सखी ने वह वृत्तान्त उसकी माता के आगे प्रकट किया। रानी ने

सुनकर राजा के आगे वर्णन किया और कहा महाराज! पुत्री आपकी वर-योग्य हुई है। इसका वर क्यों नहीं ढूँढ़ते। यह सुनके राजा ने अपने जी में चिन्ता कर, उसी समय मित्रावसु नाम के अपने पुत्र को बुलाकर कहा, बेटा! अपनी बहिन के लियें वर ढूँढ़ लाओ। तब वह बोला कि महाराज! गन्धर्वों का राजा जीमूतकेतु है। सुना है कि उसका पुत्र जीमूतवाहन और उसका पिता, राज्य छोड़, दोनों यहाँ आये हैं। यह सुन राजा मलयकेतु ने कहा, यह पुत्री जीमूत-वाहन को दूँगा।

इतना कह, बेटे को आज्ञा दी कि जीमूतवाहन राजकुमार को राजा के पास से जाकर बुला लाओ। मित्रावसु पिता का हुक्म पाकर, उसके मकान पर गया और वहाँ जाकर उसके पिता से कहा कि अपने पुत्र को हमारे साथ कर दो। हमारे पिता ने कन्यादान देने को बुलाया है। यह सुनके राजा जीमूतकेतु ने अपने बेटे को साथ कर दिया और जीमूतवाहन यहाँ आया। मलयकेतु राजा ने उसका गन्धर्वविवाह कर दिया। जब इसका ब्याह हो चुका तब दुलहिन को और मित्रावसु को अपने स्थान पर लेकर आया। इन तीनों ने राजा को दण्डवत् की और राजा ने उन्हें आशिष दी। वह दिन तो यों ही बीता। दूसरे दिन प्रातःकाल को उठते ही दोनों राजकुमार मलयागिरि पर्वत पर फिरने को गये। वहाँ जाकर जीमूतवाहन क्या देखता है कि एक सफेद ढेर ऊँचा सा है। तब इसने अपने साले से पूछा कि भाई यह धौला-धौला ढेर कैसा दृष्टि आता है। वह बोला पाताल लोक से करोड़ों नागकुमार वहाँ आते हैं। उन्हें गरुड़ आके खाता है। यह उन्हीं के हाड़ों का ढेर है। यह सुनके जीमूतवाहन ने साले से कहा कि मित्र, तुम घर जाके भोजन करो और मैं इस समय अपनी नित्य पूजा करता हूँ। मेरा पूजा करने का अब समय हुआ है। यह सुनके वह तो गया और जीमूतवाहन ज्यों ही आगे बढ़ा, त्यों ही उसने रोने की आवाज सुनी। वह उसी आवाज की ध्वनि पर चला और वहाँ जा पहुँचा, तो क्या देखता है कि एक बुढ़िया दुःख से व्याकुल रोती है। उसके पास जा पूछा कि हे माता! तू किस कारण रोती है? वह बोली शंखचूड़ नाम नाग जो मेरा बेटा है उसकी आज बारी है। उसे गरुड़ आ खावेगा, इस दुःख से मैं रोती हूँ। इसने कहा हे माता! मत रो तेरे पुत्र के बदले मैं अपना प्राण दूँगा। बुढ़िया बोली बेटा! ऐसा मत कीजियो। तू ही मेरा शंखचूड़ है, यह कहती ही थी कि शंखचूड़ भी आ पहुँचा और इसने सुनके कहा, अय महाराज! मुझसे दरिद्री बहुत से पैदा होते हैं और मरते हैं पर आपसे धर्मात्मा दयावन्त संसार में घड़ी-घड़ी पैदा

नहीं होते। इससे आप मेरे पलटे अपना जी न दीजिये। क्योंकि आपके जीते रहने से लाखों आदमियों का उपकार होगा और मेरा जीना मरना दोनों बराबर हैं। तब जीमूतवाहन बोला कि यह सत्पुरुषों का धर्म नहीं है, जो मुँह से कहकर न करें। तू जहाँ से आया है वहीं को जा। यह सुन शंखचूड़ तो देवी के दर्शन को गया और आकाश से गरुड़ उतरा। इतने में राजकुमार देखता क्या है कि पाँव तो उसके चार-चार बाँसों के बराबर हैं और चोंच उसकी ताड़ सी लम्बी है, पहाड़ के समान पेट, फाटक के मानिन्द आँखें और घटा से बाल। वह एकाएकी चोंच खोल राजपुत्र पर दौड़ा। पहले राजपुत्र ने अपने तईं बचाया, पर दूसरी बार वह चोंच में रख, इसको ले उड़ा और चक्कर मारने लगा। इतने में एक बाजूबन्द कि जिसके नग पर राजा का नाम खुदा हुआ था, वह खुलकर लोहूभरा राजकन्या के सम्मुख गिर पड़ा। वह उसको देखकर मूर्च्छा खा गिर पड़ी। जब एक घड़ी के बाद चेती तो उसने सब वृत्तान्त अपने माता-पिता को कहला भेजा। वे यह विपत्ति सुनकर आये और रुधिरभरा बाजूबन्द देख रोये और तीनों आदमी ढूँढ़ने को निकले।

रास्ते में इन्हें शंखचूड़ भी मिला और उनसे बढ़कर अकेला वहाँ गया जहाँ राजकुमार को देखा था और पुकार-पुकार कहने लगा अय गरुड़! छोड़ दे, छोड़ दे, यह तेरा भक्ष्य नहीं। शंखचूड़ मेरा नाम है। मैं तेरा भक्ष्य हूँ। यह सुनकर गरुड़ घबड़ा कर गिरा और अपने जी में सोचा कि ब्राह्मण या क्षत्री मैंने खाया है। यह क्या किया? तब इस राजपुत्र से कहने लगा अय पुरुष! सच कह कि तू किसलिये अपना जी देता है? राजकुमार बोला, अय गरुड़! वृक्ष औरों के ऊपर छाया करते हैं और आप धूप में बैठे फूलते फलते हैं। अच्छे पुरुषों और वृक्षों का यही धर्म है। जो यह देह औरों के काम न आवे, तो इस शरीर से क्या प्रयोजन है? दृष्टान्त प्रसिद्ध है कि ज्यों-ज्यों चन्दन को घिसते हैं, त्यों-त्यों दूनी सुगन्ध देता है। ऊख ज्यों-ज्यों छील काटकर टुकड़े करते हैं, त्यों-त्यों अधिक स्वाद देती है। ज्यों-ज्यों कञ्चन को जलाते हैं, त्यों-त्यों सुन्दर होता जाता है। उत्तम लोग प्राण जाने से भी अपना स्वभाव नहीं छोड़ते। उन्हें किसी ने भला कहा तो क्या और बुरा कहा तो क्या। जो दौलत रही तो क्या जो न रही तो क्या। अभी मरे तो क्या और मुद्दत के बाद मरे तो क्या। जो मनुष्य न्याय की राह से चलते हैं, कुछ हो और राह पर पाँव नहीं रखते तो क्या हुआ? जो मोटे हुए या दुबले, निदान जिसके शरीर से उपकार न हो, उसका जीना निष्फल है। बिराने अर्थ

जिसका जीव है उन्हीं का जीना सफल है। यों तो कुत्ता, कौवा भी अपना तन पालता है। जो ब्राह्मण, गौ, मित्र, स्त्री के वास्ते अथवा औरों के वास्ते जी देते हैं, वे ही निश्चय सदा वैकुण्ठवास करते हैं। गरुड़ बोला जगत् में सब अपने प्राण की रक्षा करते हैं। अपना जी दे, दूसरे के जी को बचाने वाले संसार में विरले ही होते हैं। यह कह गरुड़ बोला कि वर माँग। मैं तेरे साहस पर संतुष्ट हुआ। यह सुनके जीमूतवाहन ने कहा कि हे देव! जो तुम मेरे ऊपर प्रसन्न हुए हो तो अब नागों को न खाओ और जो खाये हैं, उन्हें जिला दो। यह सुन गरुड़ ने पाताल से अमृत लाकर सर्पों के हाड़ों पर छिड़का कि फिर वे जी उठे और इससे कहा, अय जीमूतवाहन! मेरे प्रसाद से तेरा गया हुआ राज फिर तुझे मिलेगा। यह वर दे गरुड़ अपने स्थान पर गया और शंखचूड़ भी अपने धाम को गया और जीमूतवाहन भी वहाँ से चला कि राह में उसकी स्त्री, ससुर और सासु मिले। उन समेत वह अपने बाप के पास आया। जब यह हाल सुना, तो उसके चचा और चचेरे भाई और सारे कुटुम्ब के लोग मिलने को आये और पाँवों पड़ इन्हें ले जा राज पर बिठाया। इतना कथा कह वेताल ने पूछा अय राजा! इनमें से सत् किसका अधिक हुआ? राजा बोला शंखचूड़ का। वेताल ने कहा किस तरह? राजा ने कहा, गया हुआ शंखचूड़ फिर जी देने को आया और गरुड़ के खाने से इसे बचाया। वेताल बोला कि जिसने पराये लिए अपनी जान दी, उसका सत् क्यों न अधिक हुआ? राजा ने कहा जीमूतवाहन जाति का क्षत्री है, उसे जी देने का अभ्यास हो रहा है, इससे उसे जान देना कुछ कठिन न मालूम दिया। यह सुन वेताल फिर उसी वृक्ष में जा लटका और राजा वहाँ जा उसे बाँध काँधे पर रख ले चला॥ १५॥

सोलहवीं कहानी।

वेताल बोला कि अय राजा, वीर विक्रमादित्य! चन्द्रशेखर नाम एक नगर है। वहाँ का रहने वाला रत्नदत्त एक सेठ था। उसके एक बेटी थी, जिसका नाम उन्मादिनी था। जब वह नवयौवना हुई तो उसके बाप ने वहाँ के राजा से जाकर कहा कि महाराज! मेरे घर में एक कन्या है। यदि आपको उसकी चाह हो, तो लीजिये नहीं तो मैं और किसी को दे दूँ। यह सुन राजा ने दो तीन प्राचीन दासों को बुलाकर कहा कि इस सेठ की पुत्री के लक्षण देख आओ। वे राजा की आज्ञा से सेठ के घर आये और उस लड़की का रूप देख मोहित हो गये। रूप ऐसा था कि मानो अँधेरे घर का उजाला हो, आँखें मृग की सी, चोटी नागिन सी, भौंहें कमान सी, नाक कीर की सी, दाँत की

बत्तीसी मोतियों की लड़ी सी, ओंठ कुँदुरू के मानिन्द, गला कपोत का सा, कमर चीते की सी, हाथ-पाँव कोमल कमल से। वह चन्द्रमुखी, चम्पकबदनी, हंसगमनी और कोकिलबयनी थी। उसके रूप को देख इन्द्र की अप्सराएँ भी लजाती थीं। इस प्रकार की सुन्दरी सब सुलक्षणभरी देख, उन्होंने आपस में विचार किया कि ऐसी जो नारी राजा के घर में जायगी, तो राजा इसके अधीन हो राजपाट की चिन्ता कुछ न करेगा। इससे भला यह है कि राजा से कहिए कि यह कुलक्षणी है, आपके योग्य नहीं। यह विचारकर वहाँ से राजा के पास आ उन लोगों ने यह निवेदन किया कि महाराज! उस कन्या को हमने देखा। वह आपके योग्य नहीं है। यह सुन के राजा ने सेठ से कहा कि मैं ब्याह न करूँगा। सेठ ने अपने घर आ क्या काम किया कि बलभद्र जो राजा का सेनापति था, उसके साथ अपनी पुत्री का ब्याह कर दिया। वह उसके घर में रहने लगी।

एक दिन का हाल है कि राजा की सवारी उस राह से निकली और वह भी उस समय शृंगार किये अपने कोठे पर खड़ी थी। संयोगवश राजा की और उसकी चार नजरें हुईं। राजा अपने मन में कहने लगा कि यह देवकन्या है या अप्सरा है या नरकन्या है? निदान उसका रूप देख वह मोहित हो गया और वहाँ से निपट बेकरार हो अपने मन्दिर को आया। राजा का मुँह देख, द्वारपाल बोला कि महाराज! आपके शरीर में क्या व्यथा है? राजा ने कहा आज मैंने आते हुए बाट में एक कोठे पर एक सुन्दरी स्त्री देखी है। मैं नहीं जानता कि वह देवकन्या है या परी है अथवा नरकन्या है कि उसके रूप ने एकाएक मेरा मन मोह लिया, इससे मैं बेकल हूँ। यह सुनकर दरवान ने विनय की कि महाराज वह उसी सेठ की लड़की है, जिसको आपका सेनापति बलभद्र ब्याह लाया है। राजा ने कहा, मैंने जिन लोगों को लक्षण देखने भेजा था, उन्होंने मुझसे छल किया। यह कह राजा ने चोपदार को आज्ञा दी कि उन लोगों को जल्दी ले आओ। राजा की आज्ञा पा चोपदार उन लोगों को बुला लाया। जब वे राजा के सम्मुख आये तब राजा ने कहा मैंने जिस लिये तुम्हें भेजा था और जो मेरी इच्छा थी सो तुमने न की और अपने जी से एक बात झूठी बनाकर मुझसे कह दी और आज मैंने अपनी आँखों से उसे देखा। वह ऐसी सुन्दरी नारी सब गुण पूरी है कि इस समय उससी मिलनी कठिन है। यह सुनके उन लोगों ने कहा कि महाराज! जो आप कहते हैं, सो सच है। पर हमने जिस वास्ते इसे कुलक्षणी हुजूर से विनय की सो वह जुदा आप सुनिये। आपस में हम लोगों ने यह विचारा कि ऐसी सुन्दरी स्त्री जो महाराज

के घर में जायगी, तो महाराज देखते ही उसके वश होंगे और राजकाज सब छोड़ देंगे तो राजभङ्ग होगा, इससे ऐसा बनाकर कहा । यह सुनकर राजा ने उनसे कहा कि तुम सच कहते हो । उसकी याद में राजा को निपट बेचैनी थी और सब लोगों पर राजा की बेकरारी प्रकट थी । इतने में बलभद्र भी आ पहुँचा और उसने हाथ जोड़ राजा के सामने खड़े होकर विनय की कि हे पृथ्वीनाथ ! मैं आपका दास हूँ यह आपकी दासी है और उसके हेतु आप इतना कष्ट पावें इससे महाराज ! आप आज्ञा दीजिये कि वह हाजिर हो । यह बात सुन राजा क्रोध करके बोला कि बिरानी स्त्री के पास जाना बड़ा अधर्म है । यह बात क्यों तूने कही ? क्या मैं अधर्मी हूँ, जो अधर्म करूँ । बिरानी स्त्री माता के समान है और बिराना धन माटी के बराबर है । सुनो भाई, जैसा अपना जी आदमी समझे वैसा ही सबका जी समझे । तब बलभद्र बोला कि वह मेरी दासी है और जब मैंने आपको दे दी, तब बिरानी क्योंकर हुई ? राजा ने कहा जिस काम के करने से संसार में कलंक लगे सो काम मैं न करूँगा । सेनापति ने विनय की कि महाराज ! उसे मैं घर से निकाल और जगह रख वेश्या कर आपके पास लाऊँगा । राजा ने कहा जो तू सती नारी को वेश्या करेगा तो मैं तुझे बड़ा दण्ड दूँगा । यह कह राजा उसकी याद में चिन्ता करके दश दिन में मर गया ।

फिर बलभद्र सेनापति ने अपने गुरु से जाकर पूछा कि मेरा स्वामी उन्मादिनी के कारण मुआ । अब मुझे जो करना उचित हो सो आज्ञा कीजिये । उसने कहा सेवक का धर्म यह है कि स्वामी के पीछे अपना जी दे दे । यह सुनके बख्शी वहाँ गया, जहाँ लोग राजा को जलाने को ले गये थे । जितनी बेर में राजा की चिता तैयार हुई, उसने भी स्नान पूजा से छुट्टी की और जब राजा की चिता में आग दी गई, तब यह भी चिता के पास जा सूर्य के सामने हाथ जोड़ कहने लगा कि अय सूर्यदेवता ! मैं मन वच कर्म करके यही कामना माँगता हूँ कि जन्म-जन्म इसी स्वामी को पाऊँ और तेरा गुण गाऊँ । इतना कह दण्डवत् कर वह आग में कूद पड़ा । यह खबर सुन उन्मादिनी अपने गुरु के पास गई और उससे सब हाल कहके पूछा कि महाराज स्त्री का क्या धर्म है ? उसने कहा माता-पिता ने जिसको अपनी कन्या दी, उसी की सेवा करने से वह कुलवन्ती कहलाती है और धर्मशास्त्र में ऐसा लिखा है कि जो नारी अपने स्वामी के जीते तप व्रत करती है, वह अपने स्वामी की अवस्था कम करती है और अन्तकाल में नरक में पड़ती है ।

उत्तम तो यह है कि कैसा ही स्वामी हीन हो, उसकी सेवा करने ही से स्त्री की मुक्ति होती है। सती होने की कामना कर स्त्री जितने पाँव जमीन पर रखती है, उतने ही अश्वमेध यज्ञ करने का उसे फल होता है। इसमें कुछ सन्देह नहीं। सती होने के समान नारी का कोई धर्म नहीं। यह सुन वह दण्डवत् कर अपने घर को आई और स्नान ध्यान कर ब्राह्मणों को बहुत सा दान दे, चिता के पास जा, एक परिक्रमा कर बोली कि हे नाथ! मैं जन्म-जन्म तेरी दासी होऊँ। इतना कह यह भी आग में जल गई। इतनी कथा कह वेताल बोला कि अय राजा! इन तीनों में किसका सत् अधिक हुआ? राजा वीर विक्रमादित्य ने कहा उस राजा का। वेताल ने कहा किस तरह? राजा बोला सेनापति की दी हुई स्त्री को छोड़ा और उसी के वास्ते जान दी, पर धर्म रक्खा। स्वामी के लिये सेवक को जी देना उचित है और पति के लिये स्त्री को सती होना उचित हैं। इस कारण राजा का सत् अधिक हुआ। इतना सुन वेताल उसी तरुवर में जा लटका और राजा भी पीछे-पीछे जा फिर उसे बाँध और काँधे पर रख ले चला॥ १६॥

सत्रहवीं कहानी।

वेताल बोला कि अय राजा! उज्जैन नगरी का महासेन नाम का एक राजा था और वहीं का वासी देवशर्मा एक ब्राह्मण था, जिसके बेटे का नाम गुणाकर था। वह ज्वारी हुआ। यहाँ तक कि जो कुछ ब्राह्मण का धन था, सो सब वह जुए में हार गया। तब सारे कुनबे के लोगों ने गुणाकर को घर से निकाल दिया। जब उससे कुछ बन न पाया, तब लाचार हो वह वहाँ से चल कितने एक दिनों में एक शहर में आया। यहाँ देखता क्या है कि एक योगी धूनी लगाये हुए बैठा है। उसे दण्डवत् कर यह भी वहाँ बैठ गया। योगी ने इससे पूछा कि तू कुछ खायगा? इसने कहा महाराज! दोगे तो क्यों न खाऊँगा। योगी ने एक आदमी की खोपड़ी में खाना भरके इसे ला दिया। इसने देखकर कहा कि इस कपाल का अन्न मैं न खाऊँगा। जब इसने भोजन न किया, तब योगी ने ऐसा मन्त्र पढ़ा कि एक यक्षिणी हाथ जोड़ आनके प्रकट हुई और बोली कि महाराज! जो आज्ञा हो सो करूँ। योगी ने कहा कि इस ब्राह्मण को इच्छा भोजन दे। इतना सुनके एक अच्छा सा मन्दिर बना, उसमें सब सुख के सामान रख, इसे यहाँ से अपने साथ ले गई और एक चौकी पर बैठा भाँति भाँति के व्यञ्जन और पकवान थाल भर भर उसके सामने रक्खे। उसने मनमाना जो भाया सो खाया। इसके बाद पानदान

इसके सम्मुख रख दिया और केसर चन्दन गुलाब में घिसकर उसके बदन में लगाया। फिर अच्छे अच्छे वस्त्र सुगन्धों से बसाकर पहना फूलों की माला गले में डाल, वहाँ से पलँग पर जा बिठाया। इतने में साँझ हुई और यह भी अपनी तैयारी कर सेज पर जा बैठी और उस ब्राह्मण ने सारी रैन सुख चैन से काटी। जब भोर हुआ, तब वह यक्षिणी अपने स्थान को चली गई। तब इसने योगी से आनकर कहा कि स्वामी! वह तो चली गई अब मैं क्या करूँ? योगी बोला कि वह विद्या के बल से आई थी जिसे विद्या आती है उसके पास रहती है। इसने कहा महाराज! वह विद्या मुझे दो, तो मैं साधूँ। तब योगी एक मन्त्र उसको दिया और कहा कि इस मन्त्र को चालीस दिन आधी रात के समय जल में बैठ एकचित्त हो के साध।

इसी तरह से वह साधने को जाया करता और अनेक तरह के भय उसे दृष्टि आते। पर यह किसी से न डरता। जब वह मुद्दत हो चुकी तो इसने योगी से आकर कहा कि महाराज! जितने दिन आपने कहे थे, मैं साध आया। उसने कहा इतने दिन अब आग में बैठकर साध। तब इसने कहा कि महाराज! एक बार मैं अपने कुटुम्ब से मिल आऊँ फिर आके साधूँगा। यह योगी से कह और विदा हो वह अपने घर को गया। कुनबे के लोगों ने इसे जो देखा तो वे उसे गले लगा, रोने लगे और इसके बाप ने कहा अय गुणाकर! इतने दिनों तू कहाँ था और किस वास्ते घर को बिसारा? अय पुत्र! ऐसे कहा है कि जो पतिव्रता स्त्री को छोड़ के जुदा रहता है और युवा स्त्री को पीठ देता है अथवा जो जिसे चाहता है, वह उसे नहीं चाहता, तो वह चाण्डाल के समान होता है। यह भी कहा है कि गृहस्थ धर्म के बराबर और कोई धर्म नहीं और घरवाली स्त्री के बराबर कोई संसार में सुख देनेवाली स्त्री नहीं। जो माता-पिता की निन्दा करता है, सो अधम नर है और उसकी गति मुक्ति कभी नहीं होती। ऐसा शास्त्र में कहा है। तब गुणाकर बोला कि यह शरीर रक्त और मांस का बना हुआ है, सो कीड़ों की खानि है। इसका स्वभाव यह है कि एक दिन इसकी खबर न लीजे तो उससे दुर्गन्ध आने लगती है। जो ऐसे शरीर से प्रीति करते हैं सो मूर्ख हैं और जो इससे हित नहीं करते वे पण्डित हैं। इस शरीर का यही धर्म है कि बार-बार जन्म लेता है और बार-बार मरता है। ऐसे शरीर का क्या भरोसा कीजिये? इसे बहुतेरा पवित्र कीजिये पर यह पवित्र नहीं होता। जैसे मल का भरा घड़ा ऊपर के धोने से पाक नहीं होता। कोयले को कोई बहुतेरा धोवे, पर वह धौला नहीं होता। जिस शरीर में मल ही सदा

वहा करे वह किस तरह से शुद्ध हो सकता है । इतना कह वह फिर बोला कि किसकी कौन माता और कौन बाप, किसकी कौन जोरू और किसका कौन भाई ? इस संसार की यही रीति है कि कितने ही आते हैं और कितने ही जाते हैं । जो यज्ञ और होम के करनेवाले हैं, सो अग्नि को ईश्वर जानते हैं और जो बुद्धिहीन हैं, सो प्रतिमा बना भगवान् को मानते हैं और योगी लोग अपने घट ही में हरि को जानते हैं । ऐसे गृहस्थ धर्म को मैं न करूँगा और योगाभ्यास करूँगा । इतना कह उसने घर से बिदा ले योगी के पास अग्नि में बैठ मंत्र साधा । पर यक्षिणी न आई । तब फिर योगी के पास गया और कहा । योगी ने कहा कि विद्या तुझे न आई ? तब उसने कहा महाराज ! हाँ न आई। इतनी कथा कह वेताल बोला कि अय राजा ! कहो किस कारण उसे विद्या न आई ? राजा बोला, वह साधक दुबित्ता था । इसलिये न आई और कहा है कि मन्त्र एकचित्त होने से सिद्ध होता है, दुचित्ता होने से नहीं । और यह भी कहा है कि जो दान से हीन हैं उनकी कीर्ति नहीं होती, जो सत् से हीन हैं उन्हें लाज नहीं, जो न्याय से हीन हैं तिन्हें लक्ष्मी नहीं मिलती, जो ध्यान से हीन हैं तिन्हें भगवान् नहीं मिलते । यह सुन वेताल ने कहा, जो साधक मन्त्र सिद्ध करने के लिए आग में बैठा, वह किस तरह दुचित्ता हुआ ? राजा ने कहा मन्त्र साधने के समय जब वह अपने कुटुम्ब से मिलने गया, उस समय योगी ने क्रोध कर अपने मन में कहा कि ऐसे दुचित्ते साधक को मैंने विद्या क्यों सिखाई ? इसलिए उसे विद्या न आई और यह भी कहा है कि मनुष्य कितना ही पराक्रम करे, पर कर्म उसके साथ रहता है और कितना ही काम अपनी बुद्धि से करे पर भाग्य का लिखा ही मिलता है । यह सुनकर वेताल फिर उसी वृक्ष पर जा लटका और राजा भी उसके पीछे जा उसे बाँध और काँधे पर रख, ले चला ॥ १७ ॥

अठारहवीं कहानी ।

वेताल बोला कि अय राजा ! कूबलपुर नाम एक नगर है । वहाँ के राजा का नाम सुदत्त था और उस नगर में धनाक्ष नाम का एक सेठ भी रहता था। उसकी पुत्री का नाम धनवती था । छोटी उमर में उसका ब्याह एक गौरीदत्त नाम के बनिये से कर दिया गया । कितने दिनों के पीछे एक लड़की उसके हुई । नाम उसका मोहनी रक्खा गया । जब वह कई वर्षों की हुई तब बाप उसका मर गया और उस बनिये के भाईबन्दों ने उसका सर्वस्व छीन लिया । वह लाचार हो अपनी बेटी का हाथ पकड़ अँधेरी रात के समय उस घर से

निकल अपने माता-पिता के घर चली । थोड़ी दूर जाकर राह भूल, एक मरघट में जा निकली । वहाँ एक चोर शूली पर टँगा हुआ था । अचानक इसका पाँव उसके पाँव में लगा । वह बोला, इस समय मुझे किसने दुःख दिया । तब यह बोली कि मैंने जानकर तुझे दुःख नहीं दिया मेरा अपराध क्षमा कर । उसने कहा दुःख और सुख कोई किसी क नहीं देता । जैसा विधाता उसके भाग्य में लिख देता है वैसा ही होता है । जो मनुष्य कहते हैं कि यह काम हमने किया, वे बुद्धिहीन हैं । क्योंकि मनुष्य कर्म के तागे में बँधे हुए हैं । वह जहाँ-जहाँ चाहता है वहाँ-वहाँ खैंच ले जाता है । विधाता की बात कुछ जानी नहीं जाती । क्योंकि मनुष्य अपने मन में कुछ विचारते हैं और वह कुछ और कर देता है । तब धनवती बोली अय पुरुष ! तू कौन है ? उसने कहा, मैं चोर हूँ । मुझको तीसरा दिन शूली पर हुआ है और जान नहीं निकलती । वह बोली किस कारण ? उसने कहा बिना ब्याहा हूँ । यदि तू अपनी कन्या मुझे ब्याह दे तो करोड़ अशर्फी तुझे दूँ । विदित है कि पाप का मूल लोभ और व्याधि का मूल रस और दुःख का मूल नेह है । जो इन तीनों क ो छोड़े सो सुख से रहे । पर ये हरएक से छूट नहीं सकते । अन्त में लालच के मारे धनवती ने कन्या देने की इच्छा की और पूछा कि यह चाहती हूँ कि तेरे पुत्र हो पर किस तरह से होगा ? उसने कहा कि यह जिस समय जवान हो, उस समय एक सुन्दर ब्राह्मण को बुलाकर उसे पाँच सौ मोहरें दे और उसके पास रहे । इस तरह इसके बेटा होगा । यह सुनके धनवती ने लड़की को शूली के गिर्द चार फेरे कर, उसका ब्याह कर दिया । तब चोर ने उससे कहा ि क पूर्व दिशा में इन्दारे के पास एक बड़ का वृक्ष है । उसके नीचे वे अशर्फियाँ गड़ी हुई हैं । तू जाके ले ले । यह कहके उसका प्राण निकल गया । यह उधर को चली और वहाँ पहुँच कर उसमें से थोड़ी अशर्फियाँ ले अपने माता- पता के घर आई । उनसे यह वृत्तान्त कह उनको अपने साथ ले स्वामी के देश में लाई ।

यहाँ एक बड़ी सी हवेली बना, उसमें रहने लगी और वह लड़की दिन दिन बढ़ने लगी । जब यौवनवती हुई, तब एक दिन सखी को साथ ले कोठे पर ख , बाट निहार रही थी कि इतने में एक जवान ब्राह्मण उस राह में आ निकला और यह उसे काम के वश होकर सखा से बोली कि हे आली ! इस पुरुष को मेरी माता के पास ले जा । यह सुन उस ब्राह्मण को उसकी माता के पास ले गई । वह उसे देखकर बोला कि मेरी बेटी जवान है, जो तू इसके पास रहेगा तो मैं पुत्र के निमित्त पाँच सौ अशर्फी तुझे दूँगी । यह सुनके

उसने कहा मैं रहूँगा । ये बातें करते ही थे कि इतने में साँझ हुई । इच्छा भोजन दिया । उसने ब्यालू की । दृष्टान्त प्रसिद्ध है कि भोग आठ प्रकार का है । एक सुगन्ध, दूसरे बनिता, तीसरे वस्त्र, चौथे गीत, पाँचवें पान, छठे भोजन, सातवें शय्या, आठवें आभूषण । ये सब वहाँ मौजूद थे । निदान जब पहर रात आई, तब उसने रङ्गमहल में जा उसके साथ सारी रैन आनन्द से काटी । जब भोर हुआ, तब वह अपने घर गया और यह उठ के अपनी सखियों के पास आई । उसमें से एक ने पूछा कि कहो रात को प्रीतम के साथ क्या-क्या आनन्द किये ? उसने कहा जिस समय कि मैं उसके पास जा बैठी उस समय मेरे जी में एक धड़का मालूम हुआ था । परन्तु उसने मुस्करा के मेरा हाथ पकड़ लिया । मैं उसके वश हो गई और मुझे कुछ खबर न रही कि क्या हुआ । कहा भी है कि एक नामी, दूसरे शूरमा, तीसरे चतुर, चौथे सरदार, पाँचवें सखी, छठे गुणवान्, सातवें स्त्रीरक्षक पुरुष को नारी इस जन्म में तो क्या, उस जन्म में भी नहीं भूलती । लाभ यह हुआ कि उसी रात में इसके गर्भ रहा । जब दिन पूरे हुए तब एक पुत्र पैदा हुआ । छठी की रात को उसकी माता ने सपने में देखा कि एक योगी जिसके सिर पर जटा, माथे पर चाँद, जो उज्ज्वल विभूति मले, श्वेत जनेऊ पहने, श्वेत कम्मल के आसन पर बैठा, सफेद साँपों की माला पहिने, मुण्डमाल गले में डाले, एक हाथ में खप्पर, दूसरे में त्रिशूल लिए हुए महाभयावनी सूरत बनाये, उसके आगे आ कहने लगा कि कल आधी रात के समय एक पिटारे में हजार मोहर का तोड़ा और इस लड़के को बन्द कर राजा के द्वार पर रख आ । यह देखते ही उसकी आँख खुल गई । सबेरा होते ही उसने अपनी माँ के आगे सब वृत्तान्त कहा । यह सुन के दूसरे दिन उसकी माता उसी तरह पिटारे में उस बालक को बंद कर राजा के द्वार पर रख आई ।

इधर राजा ने रात को स्वप्न देखा कि दश भुजा, पाँच सिर, हरएक सिर में तीन-तीन आँखें और हर एक सिर पर एक-एक चाँद, बड़े-बड़े त्रिशूल हाथ में लिए, अति डरावनी सूरत, इसके सामने आ के बोला कि अय राजा ! तेरे द्वार पर एक पिटारा रक्खा है, उसमें जो लड़का है, उसे तू ले आ, वही तेरा राज्य रक्खेगा । यह सुनते ही राजा की आँखें खुल गईं । तब रानी से सब हाल कहा और वहाँ से उठ दरवाजे पर आ देखा कि एक पिटारा धरा है, ज्यों ही पिटारे को खोलकर देखा तो उसमें एक बालक और हजार मोहर का तोड़ा धरा है । उस बालक को राजा ने आप उठा लिया और द्वारपाल से

कहा कि इस तोड़े को उठा ला। महल में जा बालक को रानी की गोद में दे दिया। इतने में प्रभात हुआ। राजा ने बाहर आ ज्योतिषियों को बुला के पूछा कि कहो इस बालक में राजलक्षण क्या-क्या हैं? तब उन पण्डितों में से एक सामुद्रिक जाननेवाला ब्राह्मण बोला कि महाराज! इस बालक में तीन लक्षण तो प्रत्यक्ष दीखते हैं। एक तो बड़ी छाती, दूसरे ऊँचा ललाट, तीसरे बड़ा चेहरा। सिवाय इसके महाराज! बत्तीस लक्षण पुरुष के जो कहे हैं सो सब इसमें हैं। इससे निःसंदेह रहिए यह राज्य करेगा। यह सुन राजा ने प्रसन्न हो मोतियों का हार अपने गले से उतार उस ब्राह्मण को दिया और सब ब्राह्मणों को बहुत सा दान दे हुक्म दिया कि इस लड़के का नाम रक्खो। तब पंडितों ने कहा महाराज! आप गाँठ जोड़कर बैठिये और महारानी गोद में बालक लेकर बैठें और सब माङ्गलिक लोगों को बुला के मङ्गलाचार करवाओ। तब हम शास्त्र की रीति से नामकरण करेंगे।

यह सुन राजा ने दीवान को बुला आज्ञा दी कि जो ये कहैं सो करो। दीवान ने बालक के होने की उसी समय नगर में डौंड़ी फिरवा दी। यह सुन के सब मङ्गलामुखी आईं और घर घर से बधाई आने लगी। राजा के मन्दिर में आनन्द के बाजे बजने लगे और मङ्गलाचार होने लगे। राजा रानी गोद में पुत्र को ले चौक पर आ बैठे और ब्राह्मण वेद पढ़ने लगे। उन ब्राह्मणों में से एक ज्योतिषी ने शुभ घड़ी लग्न मुहूर्त्त विचार उस बालक का नाम हरदत्त रक्खा। वह दिन-दिन बढ़ने लगा। निदान वह नव वर्ष की उमर में छओं शास्त्र चौदहों विद्या पढ़कर पण्डित हुआ। इसमें भगवान् का चाहा यों हुआ कि उसके माता-पिता मर गये, तब वह राजगद्दी पर बैठा और धर्मराज करने लगा। कई एक वर्षों के पीछे एक दिन वह राजा अपने मन में चिन्ता करने लगा कि मैंने माँ-बाप के यहाँ जन्म ले के उनके निमित्त क्या किया? कहावत है कि जो दयावन्त होते हैं वे सब पर दया करते हैं। वे ही ज्ञानी हैं और उन्हीं को वैकुण्ठ होता है, और जिनका मन शुद्ध नहीं, उनका दान, पूजा, तप, तीर्थ करना, शास्त्र सुनना सब वृथा है और जो श्रद्धाहीन दम्भ समेत श्राद्ध करते हैं, उनका निष्फल होता है और पितृ उनके निराश जाते हैं। यह बात राजा ने सोच समझ कर विचारा कि अब पितृकर्म करना चाहिए। तब राजा हरदत्त गया में गया और वहाँ जब अपने पितरों के नाम ले, फल्गू नदी के किनारे पिण्डदान देने लगा तब उस नदी में से तीनों के हाथ निकले। यह देख अपने जी में वह घबड़ाया कि मैं किसके हाथ में पिण्ड दूँ और

किसके हाथ में न दूँ। इतनी कथा कह वेताल बोला कि अय राजा विक्रम! उन तीनों में से किसे पिण्ड देना उचित था? तब राजा ने कहा चोर को। वेताल बोला, किस कारण? राजा ने कहा उसमें से ब्राह्मण का बीज तो मोल लिया गया और राजा ने हजार अशर्फी ले के पाला। इस वास्ते उन दोनों को पिण्ड का अधिकार न रहा। इतनी बात सुन फिर वेताल उसी तरुवर पर जा लटका और राजा उसे वहाँ से उतार, बाँध और काँधे पर रख, ले चला॥ १८॥

उन्नीसवीं कहानी।

वेताल बोला कि अय राजा! चित्रकूट नाम एक नगर है वहाँ का रूपदत्त नाम का एक राजा एक दिन अकेला सवार हो शिकार को गया। वह भूल कर एक महावन में जा निकला। वहाँ जा के देखता क्या है कि एक बड़ा सा तालाब है। उसमें कमल फूल रहे हैं और भाँति-भाँति के पक्षी कल्लोल कर रहे हैं। तालाब के चारों ओर वृक्षों की घनी छाया में ठंडी-ठंडी हवा सुगन्धों के साथ आ रही है। यह भी धूप गरमी का मारा हुआ, घोड़े को एक वृक्ष में बाँध और जीनपोश बिछा कर बैठ गया। एक घड़ी बीती थी कि एक अतिसुन्दरी यौवनवती ऋषिकन्या वहाँ पुष्प लेने को आई। उसे फूल तोड़ते देख, राजा काम के वश हुआ। जब वह फूल तोड़ के अपने स्थान को चली, तब राजा बोला कि यह तुम्हारा कैसा आचार है कि हम तुम्हारे आश्रम में अतिथि आये और तुम हमारी सेवा न करो। यह सुनके वह खड़ी हो गई। तब राजा ने कहा कि ऐसा कहा है कि यदि उत्तम वर्ण के घर नीच वर्ण भी अतिथिरूप में आवे, तो वह भी पूजनीय है भले ही वह चोर हो या चाण्डाल, शत्रु हो या पितृघातक। यदि ये भी अपने घर आवें तो उनकी भी पूजा करनी उचित है। क्योंकि अतिथि सबका गुरु है। इस तरह से जब राजा ने कहा, तब वह खड़ी हो आँखें लड़ाने लगी। इतने में वह मुनि भी आ पहुँचा। राजा ने उस तपस्वी को देख नमस्कार किया और उसने आशीर्वाद दिया कि चिरंजीव रहो। इतना कह राजा से पूछा कि यहाँ किस कारण आये हो? राजा ने कहा कि महाराज शिकार खेलने आया हूँ। तपस्वी बोला किस लिये तू महापाप करता है? ऐसा कहा है कि एक पाप करता है और अनेक उसके पाप का फल भुगतते हैं। राजा ने कहा कि महाराज! मुझ पर कृपा करके धर्माधर्म का विचार कहो। तब वह मुनि बोला कि सुनिये। जो जीव तृण, जल खा वनवास करते हैं, उनके मारने से बड़ा अधर्म होता है और मनुष्य को पशुपक्षियों के प्रतिपालन करने का बड़ा पुण्य है। कहा भी है कि

जो भय मानकर शरण आये को निर्भय कर देते हैं, वे महादान का फल पाते हैं। क्षमा बराबर तप नहीं और संतोष समान सुख नहीं, मित्रता तुल्य धन नहीं और दया समान धर्म नहीं। जो नर अपने धर्म में सावधान हैं और धन, गुण, विद्या, यश, प्रभुता पा अभिमान नहीं करते और अपनी स्त्री से संतुष्ट रहते हैं, सत्यवादी हैं, सो अन्तकाल मुक्ति पाते हैं। जो जटाधारी, वस्त्रहीन, निरायुध को मारते हैं वे लोग अन्त समय में नरक भोग करते हैं। जो राजा प्रजा के दुःखदायियों को नहीं दण्ड देता, वह भी नरक भोगता है और जो राजपत्नी या मित्र की स्त्री या कन्या या आठ नव महीने की गर्भिणी स्त्री से भोग करते हैं, सो महानरक में पड़ते हैं। ऐसा धर्मशास्त्र में कहा है। यह सुन राजा ने कहा, आज तक अनजान से जो पाप किया, सो किया। अब भगवान् ने चाहा तो मैं न करूँगा। राजा के इस कहने से मुनि ने प्रसन्न हो के कहा कि जो तू वर माँगे सो दूँ। मैं तुझसे बहुत सन्तुष्ट हुआ। तब राजा ने कहा महाराज! जो तुम मुझ पर सन्तुष्ट हुए हो, तो अपनी कन्या मुझे दो। यह सुनके मुनि ने अपनी पुत्री गन्धर्वविवाह की रीति से राजा को ब्याह दी और आप अपने स्थान को गया।

राजा ऋषि-कन्या को ले अपने नगर की तरफ चला। अनुमान आधी दूर के आया होगा कि सूर्यास्त हुआ और चन्द्रमा उदय हुआ। तब राजा एक घना सा वृक्ष देख उसके नीचे उतर और घोड़े को उसकी जड़ में बाँध जीनपोश बिछा अपनी स्त्री सहित सो रहा। दो पहर रात के समय एक ब्रह्मराक्षस ने आ राजा को जगाकर कहा कि हे राजा! मैं तेरी स्त्री को खाऊँगा। राजा ने कहा ऐसा मत कर। जो तू माँगेगा सो मैं दूँगा। तब राक्षस ने कहा कि अय राजा! जो सात वर्ष के ब्राह्मण के लड़के का सिर काटकर अपने हाथ से मुझे दे, तो मैं इसे न खाऊँ। राजा ने कहा ऐसा ही करूँगा। आज के सातवें दिन तू मेरे नगर में आइयो, मैं तुझे दूँगा। इस तरह से राजा को वचनबद्ध कर राक्षस अपने स्थान को गया और भोर हुए राजा भी अपने महल में पहुँचा। मन्त्री ने सुनके बहुत सी खुशी की और आके भेंट दी। राजा ने मन्त्री से वह वृत्तान्त कहकर पूछा कि सातवें दिन ब्रह्मराक्षस आवेगा। कहो उसका यत्न क्या करें? मन्त्री ने कहा महाराज! आप किसी बात की चिन्ता न कीजिए। भगवान् सब भला करेगा। इतना कह मन्त्री सवा मन कञ्चन का एक पुतला बनवा, उसमें जवाहिर जड़वा एक छकड़े पर रख चौराहे में खड़ा करवा कर उसके रखवालों से बोला कि जो कोई इसके देखने को आवे तो उससे कहो कि जो ब्राह्मण अपने सात वर्ष के लड़के का सिर राजा को काटकर

दे, सो इसे ले, यह कहकर वह चला आया। जो लोग उसके देखने को आते थे उससे चौकीदार यही कहते थे। दो दिन तो यों ही बीते, पर तीसरे दिन उसी नगर का एक दुर्बल ब्राह्मण कि जिसके तीन बेटे थे यह बात सुन घर में आ ब्राह्मणी से कहने लगा कि एक पुत्र अपना राजा को बलि के वास्ते दे, तो सवा मन सोने का पुतला जड़ाऊ घर में आवे। यह सुन ब्राह्मणी बोली कि छोटे लड़के को मैं न दूँगी। ब्राह्मण ने कहा बड़े को मैं न दूँगा। यह बात सुन मँझले ने कहा कि पिता मुझे दीजिये। उसने कहा अच्छा। ब्राह्मण बोला कि संसार में धन ही मूल है। धनहीन को सुख कहाँ और जो दरिद्री हुआ उसका संसार में आना वृथा है। इतना कह मँझले लड़के को ले जा चौकीदारों को दे उस पुतले को अपने घर ले आया और इधर लड़के को पहरेदार मन्त्री के पास ले आये। जब सात दिन बीत गये और वह ब्रह्मराक्षस आया तब राजा ने चन्दन, अक्षत, फूल, धूप, दीप, नैवेद्य, फल, पान और वस्त्र से उसकी पूजा की और उस लड़के को बुला खड्ग हाथ में ले बलि देने को खड़ा हुआ। इतने में पहिले तो लड़का हँसा पीछे रोया। इतने में राजा ने खड्ग मारा कि उसका सिर जुदा हो गया। सच है, ज्ञानी कह गये हैं कि स्त्री संसार में दुःख की खानि है, विपत्ति का घर और साहस की गिरानेवाली है, मोह की करने-वाली, धर्म की हरनेवाली और विष की जड़ है, उसे उत्तम किसने कहा है? और ऐसा भी कहा है कि आपदा के लिए धन रखिये और धन देके स्त्री की रक्षा कीजिये और धन स्त्री को दे के अपने जी को बचाइये। इतनी कथा कह वेताल बोला कि हे राजन्! मरने के समय तो आदमी रोता है। तू इसकी व्यवस्था बता कि वह लड़का हँसा क्यों? राजा ने कहा वह यह विचार के हँसा कि संसार की यह रीति है कि बालकपन में माता रक्षा करती है और बड़े हुए पर पिता पालता है और समय असमय में प्रजा की राजा सहायता करता है। किन्तु मेरा यह हाल है कि माता पिता ने धन के लोभ में पड़ राजा को मुझे दिया और राजा खड्ग लिये मारने को खड़ा है और देवता को बलि की इच्छा है; दया किसी को भी नहीं आती। यह सुन वेताल उसी वृक्ष पर जा लटका और राजा भी वहाँ झटपट पहुँच और उसे बाँध और काँधे पर रख, ले चला॥ १९॥

बीसवीं कहानी।

वेताल बोला कि अय राजा! विशालपुर नाम का एक नगर है। वहाँ के राजा का नाम विपुलेश्वर था। उसके नगर में एक बनिया था, जिसका नाम

अर्थदत्त और उसकी बेटी का नाम अनङ्गमञ्जरी था। उसका ब्याह कमलपुर के मुनी नामक बनिये से कर दिया था। कितने एक दिनों के पीछे वह बनिया समुद्रपार वाणिज्य को गया। यहाँ जब यह जवान हुई, तब एक दिन अपने चौबारे पर खड़ी हुई, रास्ते का तमाशा देखती थी कि इतने में एक ब्राह्मण का पुत्र कमलाकर नाम का उधर से निकला। इन दोनों की चार नजरें हुईं और देखते ही एक दूसरे पर मोहित हो गये। एक घड़ी के पीछे सूरत सँभाल ब्राह्मण का बेटा विरह से व्याकुल हो अपने मित्र के घर गया और यहाँ यह भी उसके वियोग की पीर से निपट दुःख में थी कि इतने में सखी ने आ के उठाया। पर इसे अपनी कुछ सुध न थी। फिर सखी ने गुलाब छिड़का और सुगन्धों को सुँघाया कि इतने में इसे होश आया और बोली कि अय कामदेव! महादेव ने तुझे जला कर भस्म किया। तिस पर भी तू अपनी खुटाई से नहीं चूकता और विना अपराध अबलाओं को दुःख देता है। ये बातें कर रही थी कि साँझ हुई और चाँद दृष्टि आया। तब चाँदनी की ओर देख के बोली कि हे चन्द्रमा! हम सुनती थीं कि तुम में अमृत है और किरणों की राह से तुम अमृत वर्षाते हो, सो आज मुझ पर तुम भी विष वर्षाने लगे। फिर सखी से कहा कि यहाँ से मुझे उठाकर ले चल। कारण कि मैं चाँदनी से जली मरती हूँ। तब वह उसे उठाकर चौबारे में ले गई और कहा तुझे ऐसी बातें कहते लाज नहीं आती। उसने कहा अय सखी! मैं सब जानती हूँ, पर मन्मथ ने मुझे मार के निर्लज्ज कर दिया। मैं धीरज बहुतेरा धरती हूँ, पर विरह की आग से जली जाती हूँ। मुझे घर विष सा दृष्टि आता है। सखी बोली कि तू खातिर जमा रख, मैं तेरा सब दुःख दूर कर दूँगी।

इतना कह सखी अपने घर गई, और इसने अपने जी में विचारा कि इस शरीर को उसके कारण तजूँ और फिर के जन्म ले उससे मिल सुख भोग करूँ। यह कामना कर गले में फाँसी डाल चाहा कि खैंच लें, इतने में सखी आ पहुँची और इसने झट इसके गले से रस्सी निकाल कर कहा कि जीने से सब कुछ है, मरने से कुछ भी नहीं। वह बोली कि ऐसे दुःख पाने से मरना भला है। सखी ने कहा एक घड़ी धैर्य धर, मैं उसको जाकर ले आती हूँ। इतना कह वहाँ गई जहाँ कमलाकर था। फिर उसे छिप कर देखा तो वह भी विरह से व्याकुल हो रहा है, और उसका मित्र गुलाब के पानी से चन्दन घिस-घिस उसके बदन में लगा रहा है और केले के कोमल-कोमल पत्तों से पवन कर रहा है। तिस पर भी विरह की आग से वह घबरा कर जला-जला पुकारता

है और मित्र से कहता है कि विष ला दे मैं अपना प्राण त्याग कर इस कष्ट से छूटूँ। इसकी यह दशा देख उसने अपने जी में कहा कैसा ही साहसी पण्डित चतुर विवेकी धीर मनुष्य हो, पर कामदेव उसे एक क्षण में विकल कर देता है। इतना अपने मन में विचार सखी ने उससे कहा, अय कमलाकर! तेरे तई अनङ्गमञ्जरी ने कहा है कि तू आके मुझे जीदान दे। इसने कहा यह तो उसने मुझे जीदान दिया। इतना कह वह उठ खड़ा हुआ और सखी इसे अपने साथ लिये हुए उसके पास गई। यह वहाँ जाके देखे तो वह मरी हुई पड़ी है। फिर इसने भी एक आह का नारा मारा कि उसके साथ इसका भी दम निकल गया। जब सुबह हुई तब उसके घर के लोग इन दोनों को मरघट में ले गये और चिता चुनकर उन्हें रख; आग लगाई ही थी कि इसमें उसका पति भी परदेश से मरघट की राह आ निकला। तब लोगों के रोने का शब्द सुनकर, यह वहाँ गया तो देखता क्या है कि मेरी स्त्री परपुरुष के साथ जलती है। तब तो वह भी विरह से व्याकुल हो उसी आग में जलकर मर गया। नगर के लोग यह खबर सुन आपस में कहने लगे कि ऐसा अचरज न आँखों देखा न कानों सुना। इतनी कथा कह वेताल बोला कि अय राजा! इन तीनों में से कौन सा अधिक कामी हुआ? राजा बोला कि उसका पति। वेताल ने कहा किस कारण? राजा ने कहा इसलिए कि उसने अपनी स्त्री को और के अर्थ मरी देख और क्रोध त्याग कर, उसके प्रेम में मग्न हो अपनी जान दी। यह बात सुन वेताल फिर उसी वृक्ष पर जा लटका और राजा भी वहीं जा, उसे बाँध और काँधे पर रख, ले चला॥ २०॥

इक्कीसवीं कहानी।

वेताल बोला कि अय राजा! जयस्तल नाम का एक नगर है। वहाँ का बर्धमान नाम का एक राजा था। उसके नगर में विष्णुस्वामी नाम का एक ब्राह्मण था। उसके चार बेटे थे। एक ज्वारी, दूसरा कसबीबाज, तीसरा छिनरा, चौथा नास्तिक। एक दिन वह ब्राह्मण अपने बेटों को समझाने लगा कि जो कोई जुआ खेलता है उसके घर में लक्ष्मी नहीं रहती। यह सुन ज्वारी अपने जी में बहुत दिक्क़ हुआ और कहा कि राजनीति में ऐसा लिखा है कि ज्वारी के नाक कान काट देश से निकाल देना उत्तम है जिससे और लोग जुआ न खेलें। ज्वारी के जोरू लड़कों के घर में होते भी उन्हें घर में न जानना चाहिए। क्योंकि नहीं मालूम किस समय वह उन्हें हार दे। जो वेश्या के चरित्रों पर मोहित होते हैं, वे अपने जी को दुःख बिसाहते हैं और

कसबी के वश में हो अपना सर्वस्व दे, अन्त को चोरी करते हैं। कहा भी है कि जो स्त्री आदमी के मन को एक घड़ी में मोह ले, उससे ज्ञानी दूर रहे। अज्ञानी उससे प्रीति कर अपना सत्, शील, यश, आचार, विचार, नेम, धर्म सब खोते हैं और उसको अपने गुरु का उपदेश भला नहीं लगता। ऐसा कहा है जिसने अपनी लाज खोई, वह दूसरे की लाज खोने से कब डरता है। मसल है कि जो बिलाव अपने बच्चे को खाता है वह चूहे कब छोड़ेगा। फिर कहा कि जिन्होंने बालापन में विद्या न पढ़ी और जवानी में काम से आतुर हो यौवन के गर्व में रहे, वे वृद्धकाल में पछताकर हिरस की आग में जलते हैं। यह बात सुन, उन चारों ने आपस में विचार कर कहा कि विद्याहीन पुरुष के जीने से तो मरना भला है। इससे उत्तम यह है कि विदेश में जाकर विद्या पढ़िये। यह बात आपस में ठान वे एक और नगर में गये और कितने एक दिनों में पढ़ के पण्डित हो अपने घर को लौटे। लौटते समय राह में देखते क्या हैं कि एक कंजर मरे हुए शेर की हड्डी और चमड़ा जुदा कर गठरी बाँध चाहता था कि ले जायँ, इतने में इन्होंने आपस में कहा कि आओ अपनी अपनी विद्या आजमावें। यह ठहराय एक ने उसे बुलाकर कुछ दिया और उससे वह मोट ले उसे विदा किया और रास्ते से किनारे हो उस मोट को खोला। फिर एक ने सारी हड्डियाँ कई जगह लगा मंत्र पढ़ छींटा मारा कि वे हाड़ लग गये। दूसरे ने इसी तरह से उन हड्डियों पर मांस जमा दिया, तीसरे ने उसी भाँति से मांस पर चाम बिठा दिया, चौथे ने इसी रीति से उसे जिला दिया। तब वह शेर उठते ही इन चारों को खा गया। इतनी कथा कह वेताल बोला, अय राजा! उन चारों में कौन अधिक मूर्ख था? राजा विक्रम ने कहा कि जिसने उसे जिला दिया। कहा है कि बुद्धि विना विद्या किसी काम की नहीं। बल्कि विद्या से बुद्धि उत्तम है और बुद्धिहीन इसी तरह से मरते हैं जैसे सिंह के जिलानेवाले मरे। यह सुन वेताल फिर उसी वृक्ष पर जा लटका और राजा फिर उसी तरह उसे बाँध और काँधे पर रख ले चला॥ २१॥

बाईसवीं कहानी।

वेताल बोला कि अय राजा! विश्वपुर नाम का एक नगर है। वहाँ का विदग्ध नाम का एक राजा था। उसके नगर में नारायण नाम का एक ब्राह्मण था। वह एक दिन अपने मन में चिन्ता करने लगा कि मेरा शरीर वृद्ध हुआ और मैं दूसरे की काया में पैठने की विद्या जानता हूँ इससे उचित यह है कि

इस पुरानी देह को छोड़ और किसी युवा के शरीर में जाके योग करूँ। जब वह यह अपने जी में विचार कर चुका और एक तरुण के शरीर में पैठने लगा, तो पहिले रोया और पीछे हँसा। फिर उसमें पैठकर अपने घर में आया। परन्तु इसके सारे कुटुम्ब के लोग उसके कर्तब को जानते थे। उनके आगे कहने लगा कि अब मैं योगी हुआ। इतना कहके वह यह श्लोक पढ़ने लगा कि जो आशा के सरोवर को तपस्या के तेज से सुखा उसमें मन को रख के शिथिल करे, वह योगी चतुर कहावे। यह गति संसार के लोगों की है कि अङ्ग गले, मुण्ड हिले, दाँत गिरे, बूढ़े हुए, लठी ले फिरें तो भी तृष्णा नहीं मरती और इसी तरह से काल चला जाता है कि दिन हुआ रात हुई महीना हुआ वर्ष हुआ बूढ़ा हुआ। कुछ नहीं मालूम कि मैं कौन हूँ और लोग कौन हैं और कौन किस लिए किसी का शोक करता है। एक आता है, एक जाता है और अन्त में सब जीव जानेवाले हैं। इनमें से एक न रहेगा अनेक अनेक मन्त्र हैं और अनेक अनेक मोह हैं। भाँति भाँति के पाखण्ड ब्रह्मा ने रचे हैं पर बुद्धिमान् इनसे बचे। जो आशा और तृष्णा को मार, शिर मुड़ा, हाथ में दण्ड कमण्डलु ले, काम क्रोध को मार, योगी हो, नङ्गे पाँव, तीर्थ तीर्थ डोलते फिरते हैं वे मोक्ष पदार्थ पाते हैं। यह संसार स्वप्न की तरह है। इसमें किसकी खुशी कीजिये और किसका गम। केले के गाभे की तरह संसार है। इसमें सार कुछ नहीं। जो धन, यौवन, विद्या का गर्व करते हैं वे अज्ञानी हैं। जो योगी हो कमण्डलु हाथ में ले, द्वार द्वार भीख माँग दूध, घी, चीनी से अपने शरीर को पुष्ट कर कामातुर हो स्त्री से भोग करते हैं, वे अपना योग खोते हैं। इतना पढ़कर वह बोला कि अब मैं तीर्थयात्रा करूँगा। यह बात सुन उसके कुटुम्ब के लोग बहुत प्रसन्न हुए। इतनी कहानी कह, वेताल बोला अय राजा किस कारण वह रोया और किस कारण वह हँसा? राजा ने कहा कि बालकपन, काम का प्यार और जवानी का सुख यादकर और इतने दिनों उस देह में रहने के मोह से तो वह रोया और अपनी विद्या सिद्ध करके नई काया में पैठने की खुशी से वह हँसा। यह बात सुन वेताल उसी वृक्ष पर जा लटका और राजा फिर उसी तरह से उसे बाँध और काँधे पर रख ले चला ॥ २२ ॥

तेईसवीं कहानी ।

वेताल बोला कि अय राजा! धर्मपुर नामक एक नगर है। वहाँ का धर्मध्वज नामक एक राजा था। उसके शहर में गोविन्द नाम एक ब्राह्मण

चारों वेद छवों शास्त्र का जाननेवाला था और अपने धर्म कर्म में सावधान था। उसके हरिदत्त, सोमदत्त, यज्ञदत्त, ब्रह्मदत्त, चार बेटे बड़े पण्डित, बड़े चतुर और बाप की आज्ञा में सदा रहते थे। कितने एक दिनों पीछे उसका बड़ा बेटा मर गया। तब वह भी उसके दुःख से मरने लगा। उस समय वहाँ के राजा का पुरोहित विष्णु शर्मा आकर उसे समझाने लगा कि यह मनुष्य जिस समय माता के गर्भ में आता है, पहिले वहीं दुःख पाता है, दूसरे बालपन में अनेक रोगों से सताया जाता है। अपना दुःख दर्द नहीं कह सकता, तीसरे जवानी में काम के वश हो प्रियतम के वियोग से दुःख सहता है, चौथे बूढ़ा हो अपने शरीर के निर्बल होने से दुःख में पड़ता है। गरज संसार में जन्म लेने से बड़े दुःख होते हैं और सुख थोड़ा क्योंकि यह संसार दुःख का मूल है। अगर कोई वृक्ष की फुनगी पर जा चढ़े या पहाड़ की चोटी पर जा बैठे या पानी में छिप रहे या लोहे के पिंजरे में घुस रहे या पाताल में जा छिपे, तो भी काल नहीं छोड़ता। पण्डित, मूर्ख, धनवान्, निर्धन, ज्ञानी, अज्ञानी, बलवान्, निर्बल कैसा ही कोई क्यों न हो, पर यह सर्वभक्षी काल किसी को नहीं छोड़ता। सौ वर्ष मनुष्य की आयुर्बल है, तिसमें से आधी तो रात में जाती है और आधी की आधी बाल और वृद्धावस्था में। शेष जो रही सो विवाद, वियोग, शोक में बीतती है। जीव जो है सो पानी की तरङ्ग की तरह चञ्चल है। इससे इस मनुष्य को सुख कहाँ? इस कलियुग के समय सत्यवादी मनुष्य मिलना दुर्लभ है। दिन दिन देश उजड़ते हैं, राजा लोभी होते हैं, पृथ्वी मन्द फल देती है, चोर, दुराचारी पृथ्वी में उपाधि करते हैं और धर्म, तप, सत् संसार में थोड़ा रहा है। राजा कुटिल, ब्राह्मण लालची, लोग स्त्री के वश हुए, स्त्री चञ्चल हुईं, पिता की निन्दा पुत्र करने लगे और मित्र शत्रुता। देखो जिनके मामा कृष्ण व पिता अर्जुन ऐसे अभिमन्यु का भी काल ने न छोड़ा। जिस समय मनुष्य को यम ले जाता है, उस समय घर की लक्ष्मी, माँ, बाप, जोरू, लड़का, भाई, बन्धु कोई काम नहीं आते। भलाई, बुराई, पाप, पुण्य ही साथ जाते हैं और वे ही कुनबे के लोग उसे मरघट में ले जाकर जला देते हैं। देखो इधर रात व्यतीत होती है, उधर दिन आता है। इधर चाँद अस्त होता है, उधर सूर्य उदय होते हैं। ऐसे ही जवानी जाती है, बुढ़ापा आती है। इस तरह काल बीतता चला जाता है, पर यह देखकर भी मनुष्य सावधान नहीं होता। देखो सतयुग में मान्धाता सा राजा, जिसने धर्म के यश से सारी पृथ्वी को छा दिया था और त्रेता में राजा

रामचन्द्रजी कि जिन्होंने समुद्र पर पुल बाँध लङ्का सा गढ़ तोड़ रावण को मारा और द्वापर में युधिष्ठिर ने ऐसा राज्य किया कि जिनका यश अब तक लोग गाते हैं, पर काल ने उन्हें भी न छोड़ा। आकाश के उड़नेवाले पक्षी और समुद्र में रहनेवाले जीव भी समय पा आपत्ति में आ पड़ते हैं। इस संसार में आके दुःख से कोई नहीं छूटा। इसका मोह करना वृथा है। इससे उत्तम यह है कि धर्मकार्य करे।

इस तरह से जब विष्णुशर्मा ने समझाया, तब उस ब्राह्मण के जी में आया कि पुण्यकार्य कीजिये। यह मन में सोच अपने बेटों से कहा कि मैं यज्ञ करने बैठता हूँ। तुम समुद्र से जाकर कछुआ ले आओ। अपने बाप की आज्ञा पा एक धीवर से जाकर उन्होंने कहा कि एक रुपया ले कच्छप पकड़ दे। उसने रुपया लिया और कच्छप पकड़ दिया। तब उनमें से बड़े भाई ने मँझले से कहा कि तू उठा ले, उसने छोटे से कहा भाई तू उठा ले। उसने कहा मैं इसे न छुऊँगा, मेरे हाथ में दुर्गन्ध आवेगी। छोटे ने कहा कि मैं भोजन करने में चतुर हूँ, मँझला बोला मैं स्त्री रखने में चतुर हूँ, बड़े ने कहा मैं सेज पर सोने में चतुर हूँ। इस तरह तीनों विवाद करने लगे और कछुवे को वहीं छोड़ झगड़ते हुए राजा के द्वार पर जा द्वारपाल से कहा कि तीन ब्राह्मण नालिशी आये हैं यह जाके तू राजा से कह। यह सुन के दरवान ने राजा को खबर दी। राजा ने बुलवाकर पूछा कि किस वास्ते आपस में झगड़ते हो? तब उनमें से छोटा बोला कि महाराज! मैं भोजन करने में चतुर हूँ, मँझले ने कहा कि पृथ्वीनाथ! मैं नारी रखने में चतुर हूँ, बड़े ने कहा मैं सोने में चतुर हूँ। यह सुन राजा ने कहा कि तुम सब परीक्षा दो। उन्होंने कहा बहुत अच्छा। राजा ने अपने रसोइयें को बुलाकर कहा कि भाँति-भाँति के व्यञ्जन और पकवान बना इस ब्राह्मण को अच्छी तरह भोजन करवाओ। यह सुन रसोईयें ने जा रसोई तैयार की और उस भोजनचतुर को ले जा थाल परस बिठलाया। उसने ग्रास उठा मुँह में देना चाहा कि इसमें दुर्गन्ध आई। उसे छोड़ और हाथ धो वह राजा के पास आया। राजाने पूछा कि तूने रुच से भोजन किया? उसने कहा कि महाराज! अन्न में दुर्गन्ध आती है। इससे मैंने भोजन नहीं किया। तब राजा ने कहा कि दुर्गन्ध का कारण कह। उसने कहा महाराज! मरघट की भूमि के चावल थे। मुर्दे की बू उसमें आती थी। इस कारण न खाया। यह सुनके राजा ने अपने भण्डारी को बुलाकर पूछा कि ये किस गाँव के चावल थे? उसने कहा महाराज शिवपुर के। राजा ने कहा वहाँ के किसान को बुलाओ।

तब भण्डारी ने उस गाँव के जमींदार को हुजूर में बुलाया। राजा ने पूछा कि ये किस भूमि के चावल हैं ? उसने कहा महाराज ! श्मशान के हैं। यह सुन राजा ने उस ब्राह्मण के लड़के से कहा कि तू सचमुच भोजन करने में चतुर है। फिर नारीचतुर को बुलवा एक मकान में पलँग बिछवा सब और खुशी के सामान रख, एक अच्छी स्त्री को बुलवा उसके पास कर दिया। वे दोनों लेटे हुए आपस में बातें करते थे कि राजा छिपके झरोखे से देखने लगा। उस ब्राह्मण ने चाहा कि उसका बोसा ले। इतने में उसके मुँह की साँस पा मुँह फेर सो रहा। राजा ने यह चरित्र देख अपने मन्दिर में जाकर आराम किया। भोर समय उठ सभा में आ उस ब्राह्मण को बुलाकर पूछा कि हे ब्राह्मण ! आज की रात तूने सुख से काटी ? उसने कहा कि महाराज सुख न पाया। तब राजा ने कहा, क्यों ? ब्राह्मण ने कहा, उसके मुख से बकरी की गन्ध आती थी, इससे मेरा जी बहुत बेचैन रहा। यह सुन राजा ने कुटनी को बुलाकर पूछा कि इसे तू कहाँ से लाई थी और यह कौन है ? उसने कहा मेरी बहिन की बेटी है। जब तीन महीने की थी तब इसकी मा मर गई थी और मैंने इसे बकरी का दूध पिला-पिलाकर पाला है। यह सुन राजा ने कहा सचमुच तू नारीचतुर है। फिर सेजचतुर को अच्छे-अच्छे बिछौने बिछा पलँग पर सुलवाया। प्रभात हुए राजा ने उसे बुलाकर पूछा कि रात भर सुख से सोया ? उसने कहा महाराज ! रात भर नींद न आई। यह सुन राजा ने कहा किस कारण ? उसने कहा महाराज ! बिछौने की सातवीं तह में एक बाल है, वह मेरी पीठ में चुभता था। यह सुन राजा ने बिछौने की सातवीं तह में देखा तो एक बाल निकला। तब उससे कहा कि सचमुच तू सेजचतुर है। इतनी बात कह बेताल ने पूछा कि अय राजा ! उन तीनों में कौन अति चतुर है ? राजा ने कहा जो सेजचतुर है। यह सुन बेताल फिर उसी वृक्ष पर जा लटका और राजा भी वहाँ जा उसे बाँध और काँधे पर रख ले चला ॥ २३ ॥

चौबीसवीं कहानी।

बेताल ने कहा कि अय राजा ! कलिंग देश में यज्ञशर्मा नाम का एक ब्राह्मण था। उसकी स्त्री का नाम सोमदत्ता था। वह अति रूपवती थी। ब्राह्मण यज्ञ करने लगा। इतने में उस स्त्री के एक सुन्दर लड़का हुआ। जब वह पाँच वर्ष का हुआ तब उसका बाप उसे शास्त्र पढ़ाने लगा। बारह वर्ष की उमर में वह सब शास्त्र पढ़के पण्डित हुआ और सदा अपने बाप की

सेवा में रहने लगा। कुछ दिन बीते वह लड़का मर गया। उसके शोक्से उसके माता-पिता चिल्ला-चिल्ला रोने लगे। यह खबर पा सारे कुनबे के लोग आये और उस लड़के को रथी में बाँधकर श्मशान ले गये। वहाँ जा उसे देख लोग आपस में कहने लगे कि देखो यह मुये पर भी सुन्दर लगता है। इस तरह से बातें करते थे और चिता चुनते थे कि वहाँ एक योगी भी बैठा तपस्या कर रहा था। यह बात सुन वह अपने जी में विचारने लगा कि मेरा शरीर अति वृद्ध हुआ। जो इस लड़के के शरीर में पैठूँ तो सुख भोग करूँ। यह सोचकर वह उस लड़के के शरीर में पैठ गया। वह करवट ले और राम-कृष्ण कह, ऐसा उठ बैठा जैसे कोई सोते से उठ बैठे। यह देख तमाम लोग अचम्भे वश में हो अपने-अपने घर आये। उसके बाप को यह अचरज देखकर वैराग्य हुआ। तो पहिले हँसा पीछे रोया। इतनी कथा कह वेताल बोला कि अय राजा विक्रम! कहो वह क्यों हँसा और क्यों रोया? राजा ने कहा कि योगी को इसके शरीर में जाते देख और यह विद्या सीखकर वह हँसा और अपने शरीर के छोड़ने के मोह से रोया कि एक दिन इसी तरह से मुझे भी अपना शरीर छोड़ना पड़ेगा। यह सुन वेताल फिर उसी वृक्ष पर जा लटका और राजा भी पीछे जा उसे बाँध और काँधे पर रख ले चला॥ २४॥

पच्चीसवीं कहानी।

वेताल बोला कि अय राजा! दक्षिण दिशा में धर्मपुर एक नगर है। वहाँ के राजा का नाम महाबल था। एक समय उसके देश का एक और राजा फौज ले उस पर चढ़ गया और उसका नगर जा घेरा। कितने एक दिनों तो वह शत्रु से लड़ता रहा पर जब उसकी सेना शत्रु से मिल गई और कुछ कट गई, तब लाचार हो, रात में रानी को बेटी समेत साथ ले, वन में निकल गया। कई कोस वन में पहुँचने पर प्रभात हुआ और एक गाँव नजर आया तब रानी और राजकन्या को एक पेड़ तले बिठला आप गाँव की तरफ खाने का सामान लेने चला ही था कि इतने में भीलों ने आ घेरा और कहा कि हथियार डाल दे। यह सुनके राजा ने तीर मारना शुरू किया और उधर [illegible] लड़ाई की और कितने एक लोग भीलों के [illegible] इन्होंने इस तरह एक [illegible] राजा [illegible] माथे में ऐसा लगा कि वह भहरा के गिर गये। इतने में एक [illegible] आ राजा का सिर काट लिया। जब रानी और राज-पड़ा। इतने में एक ने [illegible] को मुझे देखा तब वे रोती पीटती वन को चलीं। इसी कन्या ने अपने राजा [illegible] तरह से कोस दो एक चल माँदी होके बैठीं और अनेक-अनेक भाँति की

चिन्ताएँ करने लगीं। इतने में चन्द्रसेन राजा और उसका बेटा दोनों शिकार खेलते हुए उसी ओर आ निकले और दोनों के पाँव के चिह्न देख, राजा ने अपने पुत्र से कहा कि इस महावन में आदमी के पाँव के निशान कहाँ से आये ? राजपुत्र ने कहा महाराज ! ये चरणचिह्न स्त्रियों के हैं, पुरुषों के पाँव ऐसे छोटे नहीं होते। राजा ने कहा, सच है ऐसे कोमल चरण पुरुषों के नहीं होते। राजकुमार ने कहा जान पड़ता है वे इसी समय गई हैं। राजा ने कहा, चलो इस वन में ढूँढ़ें, जो मिलें तो जिसका यह बड़ा पाँव है, उसे तुझे दूँगा और दूसरी मैं लूँगा। इस तरह आपस में वचनबद्ध हो आगे जा देखें तो दोनों बैठी हुई हैं। उन्हें देख दुःखी को अपने-अपने घोड़े पर बिठा उन्हें घर ले आये। रानी को राजकुँवर ने रक्खा और राजकन्या को राजा ने। इतनी कथा कहकर वेताल बोला कि अय राजा विक्रम ! उन दोनों के लड़कों का आपस में क्या नाता होगा। यह सुन राजा अज्ञान हो चुप हो रहा। तब वेताल खुश हो बोला कि अय राजा ! मैं तेरा धीरज और साहस देख, अति प्रसन्न हुआ। पर एक बात मैं कहता हूँ सो तू सुन कि जिसके शरीर के रोम काँटों के समान, देह काठ सी और नाम शान्तिशील है, सो तेरे नगर में आ बसा है और तुझे उसने मेरे लेने को भेजा है। आप बैठा मरघट में मन्त्र जगा रहा है और तुझे मारा चाहता है। इसलिये मैं जताये देता हूँ कि जब पूजा कर चुकेगा तब तुझसे कहेगा कि अय राजा ! तू आकर योग कर, तब तू कहना कि मैं सब राजाओं का राजा हूँ और सब राजा मुझे आन के दण्डवत् करते हैं। मैंने आज तक किसी को दण्डवत् नहीं की और मैं दण्डवत् करना जानता भी नहीं। आप गुरु हैं। कृपा करके सिखा दीजिये तो मैं करूँ। जब वह दण्डवत् करे, तब ऐसा खड्ग मारना कि सिर जुदा हो जाय। तब तू अखंड राज्य करेगा और जो तू यह न करेगा तो वह तुझे मार अचल राज्य करेगा। इतनी बात राजा को चिता वेताल उस मुर्दे के देह से निकल कर चला गया और कुछ रात रहते उस मुर्दा को ला, राजा ने योगी के आगे रख दिया। योगी ने उसको देखकर और खुश हो, राजा की बहुत बड़ाई की और मन्त्र पढ़, उस मुर्दे को जगाय फिर होम कर बलि दिया और दक्षिण की तरफ बैठ जितना कुछ सरंजाम तैयार रक्खा था सो अपने देवता को भेंट किया और पात्र, फूल, धूप, दीप, नैवेद्य दे पूजा कर राजा से कहा कि तू दण्डवत् कर, तेरा बड़ा तेज प्रताप होगा और अष्टसिद्धि, नवनिधि सदा तेरे घर में रहेंगी। यह सुन राजा ने वेताल की बात याद कर, हाथ जोड़ निपट

अधीनता से कहा कि महाराज ! मैं प्रणाम करना नहीं जानता, पर आप गुरु हैं जो कृपा करके सिखा दीजिये तो मैं प्रणाम करूँ । यह सुन ज्यों ही दण्डवत् करने को सिर झुकाया त्यों ही राजा ने एक खड्ग ऐसा मारा कि सिर जुदा हो गया । तब वेताल ने आकर फूलों की वर्षा की । ऐसा कहा है कि जो अपने को मारना चाहे, उसके मारने में अधर्म नहीं । उस समय राजा का साहस देख, इन्द्र समेत सब देवता अपने अपने विमानों पर बैठ वहाँ जय-जयकार करने लगे और राजा इन्द्र ने प्रसन्न होकर राजा वीर विक्रमादित्य से कहा कि वर माँग । तब राजा ने हाथ जोड़कर कहा, महाराज ! यह कथा मेरी संसार में प्रसिद्ध हो । इन्द्र ने कहा, जब तक चन्द्र, सूर्य, पृथ्वी, आकाश स्थिर हैं तब तक यह कथा प्रसिद्ध रहेगी और तू सर्व भूमि का राजा होगा । इतना कह राजा इन्द्र अपने स्थान को गया और राजा ने उन दोनों लोथों को ले उस तेल के कड़ाह में डाल दिया । तब वे दोनों वीर आ हाजिर हुए और कहने लगे कि हमें क्या आज्ञा है ? राजा ने कहा जब मैं याद करूँ तब तुम आना । इस तरह से उनसे वचन ले, राजा अपने घर आ राज्य करने लगा । ऐसा कहा है कि पंडित हो या मूर्ख हो या लड़का हो या जवान जो बुद्धिमान् होगा उसी की जय होगी ।

इति वेतालपचीसी सम्पूर्ण



था मन

आगे

बहुत बड़ाई

दिय

था था सो

पूजा

होगा और अष्टसिद्धि

बात याद



मन

बाद